प्रसार पुस्तिका संख्या 52

पशुपालन मार्गदर्शिका

भाकृअनुप
ICAR

कृषि विज्ञान केन्द्र

(भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान)

बेजवाँ, संत रविदास नगर-221301 (उ0प्र0)

i'k|ikyu ekx|nf'k|dk

jktUn i lkn

xkfoUn dekj pkèkjh

vthr dekj pronh

jkd'k ik.M;

: ny i lkn pkèkjh

भाकृअनुप
ICAR

Ñf"k foKku dUn

¼Hkkjrh; lCth vuql/kku lLFkku½

ctok] lr jfonkl uxj&221301 ¼m0 i0½

© सर्वाधिकार : प्रकाशक के अधीन सुरक्षित

शुद्ध उद्धरण : पशुपालन मार्गदर्शिका

संकलन : राजेन्द्र प्रसाद
गोविन्द कुमार चौधरी
अजीत कुमार चतुर्वेदी
राकेश पाण्डेय
रूदल प्रसाद चौधरी

तकनीकी सहयोग : वर्णायुध व्रतधारी दीप्तिकार

इस प्रकाशन का कोई भी हिस्सा पूर्ण या आंशिक रूप से इलेक्ट्रानिक फोटो ग्राफिक अभिलेखन या अन्य किसी अर्थ में प्रतिलिपि अथवा प्रसारित नहीं किया जा सकता।

प्रकाशन वर्ष : अप्रैल, 2013

पता : कृषि विज्ञान केन्द्र
(भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान)
बेजवाँ, संत रविदास नगर–221301 (उ0प्र0)

ई–मेल : kvksrn@gmail.com

प्रकाशक : **डा. प्रकाश एस. नाईक**
निदेशक
भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान
पी.बी. 01, पो.आ. जक्खिनी (शहंशाहपुर)
वाराणसी–221305 (उ0प्र0)

मुद्रण : निर्मल विजय प्रिंटर्स, नई दिल्ली–110028
फोनः 45576780, मोबाईलः 9811053617

डा. प्रकाश एस. नाईक
निदेशक

भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान
पी.बी. 01, पो.आ. जक्खिनी (शहंशाहपुर)
वाराणसी-221305 (उ0प्र0)

प्राक्कथन

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि एवं पशुपालन का विशेष महत्व है। सकल घरेलू कृषि उत्पाद में पशुपालन का 28–30 प्रतिशत का योगदान सराहनीय है जिसमें दुग्ध एक ऐसा उत्पाद है जिसका योगदान सर्वाधिक है। भारत में विश्व की कुल संख्या का 15 प्रतिशत गायें एवं 55 प्रतिशत भैंसें है और देश के कुल दुग्ध उत्पादन का 53 प्रतिशत भैंसों व 43 प्रतिशत गायों से प्राप्त होता है। हमारा देश लगभग 121.8 मिलियन टन दुग्ध उत्पादन करके विश्व में प्रथम स्थान पर है जो कि एक मिसाल है और उत्तर प्रदेश इसमें अग्रणी है। यह उपलब्धि पशुपालन से जुड़े विभिन्न पहलुओं जैसे मवेशियों की नस्ल, पालन–पोषण, स्वास्थ्य एवं आवास प्रबंधन इत्यादि में किए गये अनुसंधान एवं उसके प्रचार–प्रसार का परिणाम है। लेकिन आज भी कुछ अन्य देशों की तुलना में हमारे पशुओं का दुग्ध उत्पादन अत्यन्त कम है और इस दिशा में सुधार की बहुत संभावनायें है।

छोटे, भूमिहीन तथा सीमान्त किसान जिनके पास फसल उगाने एवं बड़े पशु पालने के अवसर सीमित है छोटे पशुओं जैसे भेड़–बकरियाँ, सूकर एवं मुर्गीपालन रोजी–रोटी का साधन व गरीबी से निपटने का आधार है। विश्व में हमारा स्थान बकरियों की संख्या में दूसरा, भेड़ों की संख्या में तीसरा एवं कुक्कुट संख्या में सातवाँ है। कम खर्चे में, कम स्थान एवं कम मेहनत से ज्यादा मुनाफा कमाने के लिए छोटे पशुओं का अहम योगदान है। अगर इनसे सम्बंधित उपलब्ध नवीनतम तकनीकियों का व्यापक प्रचार–प्रसार किया जाय तो निःसंदेह ये छोटे पशु गरीबों के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

इस प्रकाशन में ग्रामीण परिवेश में पशुपालन से जुड़े विभिन्न समस्याओं का समाधान सरल भाषा में करने का प्रयास किया गया है। मुझे विश्वास है कि

'पशुपालन मार्गदर्शिका' नामक प्रकाशन हमारे कृषक बंधुओं एवं इस रोजगार से जुड़े सभी लोगों के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध होगा। इस सम्बन्ध में कृषि विज्ञान केन्द्र बेजवॉ, संत रविदास नगर के वैज्ञानिकों एवं उनके सहयोगियों का प्रयास सराहनीय है।

(प्रकाश एस. नाईक)
निदेशक

आभारोक्ति

भारतीय अर्थव्यवस्था में पशुपालन का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। देश की लगभग 70 प्रतिशत आबादी कृषि एवं पशुपालन पर निर्भर है। छोटे व सीमांत किसानों के पास कुल कृषि भूमि की 30 प्रतिशत जोत है। इसमें 70 प्रतिशत कृषक पशुपालन व्यवसाय से जुड़े है जिनके पास कुल पशुधन का 80 प्रतिशत भाग मौजूद है। स्पष्ट है कि देश का अधिकांश पशुधन, आर्थिक रूप से निर्बल वर्ग के पास है। भारत में लगभग 19.91 करोड़ गाय, 10.53 करोड़ भैंस, 14.55 करोड़ बकरी, 7.61 करोड़ भेड़, 1.11 करोड़ सूकर तथा 68.88 करोड़ मुर्गी का पालन किया जा रहा है। हमारा देश 121.8 मिलियन टन दुग्ध उत्पादन के साथ विश्व में प्रथम, अण्डा उत्पादन में 53200 करोड़ के साथ विश्व में तृतीय तथा मांस उत्पादन में सातवें स्थान पर है। यही कारण है कि कृषि क्षेत्र में जहाँ हम मात्र 1–2 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर प्राप्त कर रहे हैं वहीं पशुपालन से 4–5 प्रतिशत। इस तरह पशुपालन व्यवसाय में ग्रामीणों को रोजगार प्रदान करने तथा उनके सामाजिक एवं आर्थिक स्तर को ऊँचा उठाने की अपार सम्भावनायें हैं। पशुपालकों हेतु बेहतर पशुपालन के संदर्भ में विभिन्न शोध संस्थाओं से विकसित चुनिन्दा तकनीकियों का पूर्वान्चल की समस्याओं पर आधारित सारगर्भित संग्रह इस तकनीकि पुस्तिका में किया गया है।

हम सर्वप्रथम डा. प्रकाश एस. नाईक, निदेशक, भा.स.अनु.सं., वाराणसी का हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं जिनके सतत् प्रयास एवं दिशा निर्देशन से यह प्रकाशन सम्भव हुआ है। डा. अशोक कुमार सिंह, क्षेत्रीय परियोजना निदेशक, चतुर्थ जोन (भा.कृ.अनु.प.) ने इस पुस्तिका की प्रस्तुति में सफल तकनीकि मार्गदर्शन प्रदान किया, जिनके गहन अनुभव के आधार पर इस पुस्तिका को विस्तृत स्वरूप दिया जा सका। डा. अवधेश बहादुर राय, अध्यक्ष, पी.एम.ई. सेल (भा.स.अनु.सं., वाराणसी) द्वारा दिये गये बहुमूल्य सुझावों के फलस्वरूप इस पुस्तिका को कृषकों के लाभार्थ प्रकाशित किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त डा. राज नाथ प्रसाद, समन्वयक, कृषि विज्ञान केन्द्र, भा.स.अनु.सं., वाराणसी ने समय–समय पर विषयक मार्गदर्शन किया जिसके कारण इस पुस्तिका को बहुउपयोगी बनाया जा सका है।

हम आशा करते हैं कि यह संग्रह **'पशुपालन मार्गदर्शिका'** पशुपालकों एवं किसानों के लिए अवश्य लाभप्रद सिद्ध होगा।

लेखकगण

अनुक्रमणिका

क्रम सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	नस्ल चुनाव एवं अनुवांशिक सुधार	1
2.	समुचित पोषण प्रबन्धन	6
3.	आवास प्रबन्ध	11
4.	बकरी पालन	13
5.	सूकर पालन एक उभरता व्यवसाय	18
6.	मुर्गी पालन	22
7.	चारा उत्पादन तकनीकि	26
8.	संक्रामक रोग	33
9.	टीकाकरण	37
10.	परजीवी नियंत्रण	39
11.	थनैला रोग की रोकथाम	42
12.	बेली या अम्बर की रोकथाम	45
13.	विषाक्तता : लक्षण एवं उपचार	46
14.	पशु स्वास्थ्य हेतु पारम्परिक तकनीकियाँ	50
15.	पशुपालन जन्य प्रश्न एवं उत्तर	53
16.	पशुपालन विभाग के माध्यम से केन्द्र तथा राज्य सरकार द्वारा संचालित विभिन्न योजनायें	60
17.	डेयरी विकास में बैंकों का योगदान	65

नस्ल चुनाव एवं अनुवांशिक सुधार

भारत में गाय और भैंस दो मुख्य दुधारू पशु हैं और देश के कुल दुग्ध उत्पादन का अनुमानित 53 प्रतिशत भैंस, 43 प्रतिशत गाय तथा 4 प्रतिशत अन्य दुधारू पशुओं से प्राप्त होता है जबकि भैंसों की संख्या गायों से कम है। दुधारू पशुओं के अनुवांशिक क्षमता को ठीक से पहचान कर उचित प्रजनन नीति एवं सही नस्ल के पशु का पालन करना आवश्यक है जिससे दुग्ध उत्पादन को बढ़ाया जा सके। इस दिशा में उत्तर प्रदेश के लिए संस्तुत पशु प्रजनन तकनीकि सुझाव निम्नवत हैः

भैंस : वैसे तो भैंसों की अनेकों वर्णित नस्लें जैसे मुर्रा, सूरती, नीलीरावी, मेहसाना आदि हैं लेकिन उत्तर प्रदेश के लिए अधिक दुग्ध उत्पादन, लम्बी दुग्ध उत्पादन अवधि तथा आसान प्रबंधन के लिए मुर्रा सर्वश्रेष्ठ है अतः जो किसान भाई मुर्रा नस्ल की भैंस पाल रखे हैं उन्हें उत्कृष्ट उत्पादन क्षमता वाले शुद्ध नर के प्रयोग से और उन्नतशील किया जा सकता है और इससे 10 प्रतिशत अतिरिक्त दूध प्राप्त किया जा सकता है। मुर्रा नस्ल देश ही नहीं विश्व में सर्वश्रेष्ठ है और उत्तर प्रदेश में खूब पायी जाती है। अतः इसके अनुवांशिकता में किसी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। इसके अतिरिक्त जो पशुपालक अवर्णित नस्ल की भैंस रखे हैं उन्हे मुर्रा नस्ल से संकरण (क्रास) कराकर अनुवांशिक सुधार करना चाहिए।

मुर्रा भैंस

रेड सिंधी

गाय : देश में पायी जाने वाली साहीवाल, सिंधी, गीर, हरियाणा, थारपारकर प्रमुख गाय की वर्णित नस्लें हैं लेकिन उत्तर प्रदेश में बहुतायत में पायी जाने वाली श्रेष्ठ देशी नस्लें साहीवाल, सिंधी तथा गंगातीरी हैं। इनको शुद्ध सांड़ों से संकरण (क्रास) कराकर दुग्ध उत्पादन में बढ़ोत्तरी किया जा सकता है। देशी प्रजातियों में रोग प्रतिरोधक क्षमता अधिक होती है तथा आवासीय एवं आहारीय व्यवस्था पर कम खर्च करना पड़ता है। ये प्रजातियाँ बढ़ते गर्म वातावरण में अपने को आसानी से ढाल लेती हैं। अतः इन उन्नतशील प्रजातियों का विदेशी नस्लों से प्रजनन कराना आवश्यक नहीं है।

साहीवाल

गायों में संकरण : आठवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान संकरण अथवा क्रास ब्रीडिंग पर जोर दिया गया जिसके अन्तर्गत उन्नत पश्चिमी नस्लें जैसे फ्रीजियन, ब्राउन स्विस, जर्सी आदि का भारतीय नस्लों से संकरण किया गया। परिणामस्वरूप दुग्ध उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई लेकिन इसके कुछ दुष्परिणाम भी सामने आये हैं। अधिक संकर पशुओं की प्राप्ति हेतु इस विधि का प्रयोग बिना किसी भेद भाव के अंधाधुंध सभी भारतीय नस्लों पर किया गया जबकि संकरण का उद्देश्य केवल अवर्णित पशुओं पर ही करने का प्रावधान था। परिणामस्वरूप उन्नतिशील भारतीय नस्लों का तेजी से ह्रास हुआ। अतः यह निष्कर्ष निकाला गया कि केवल अवर्णित नस्लों का ही संकरण कराया जाय तथा भारतीय परिवेश (साधारण आवासीय एवं आहारीय व्यवस्था) में संकर गायों की उत्पादकता बनाये रखने के लिए उनमें 50 प्रतिशत ही विदेशी नस्लों के गुणसूत्रों का योगदान उपयुक्त है। इससे अधिक विदेशी रक्त होने पर संकर पशु भारतीय ग्रामीण परिवेश में रहने योग्य नहीं रह जाता है क्योंकि ऐसे पशुओं में रोग प्रतिरोधक क्षमता का ह्रास हो जाता है।

संकर (फ्रिजीयन)

प्रजनन सम्बन्धित जानकारियाँ

दुधारू पशुओं में बढ़ती प्रजनन समस्यायें आजकल पशुपालकों के लिए एक गंभीर समस्या बन गई है क्योंकि पशुओं में दुग्ध उत्पादन व प्रजनन क्षमता में कमी

होने से पशुपालक को सीधे आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि पशुपालकों को पशु प्रजनन के सम्बन्ध में अधिकाधिक जानकारी हो ताकि वे स्वंय अपने स्तर से इन समस्यायों का समाधान प्राप्त कर सकें।

प्रथम गर्भधारण की अवधि : आमतौर पर संकर बछिया को अधिकतम 2.5 वर्ष, देशी बछिया को 3 वर्ष तथा पड़िया को 3.5 वर्ष के अन्दर गर्भधारण कर लेना चाहिए। ब्याने के पश्चात् पुनः 3–4 महीने के अंदर दुबारा गर्भित होकर इसी प्रक्रिया से गुजरना अच्छी प्रजनन क्षमता दर्शाता है। इस प्रकार एक ब्यात से दूसरे ब्यात का अन्तराल 13–14 महीने का होता है लेकिन प्रजनन क्षमता पूर्ण न होने की दशा में यह अन्तराल अधिक हो जाता है जिससे पशुपालकों को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है।

मद चक्र : गायों व भैंसों में मद चक्र की औसत अवधि 21 दिन है। गायों में मद 18 घंटे रहता है जबकि भैंसों में लगभग 24 घंटे। गायें अधिकतर सुबह 4:00 से दोपहर 12:00 बजे तक गर्मी में आती हैं जबकि भैंसें शाम 6:00 से सुबह 6:00 बजे तक। भैंसें सर्दी के मौसम में ज्यादा प्रजनन करती हैं और रात्रि में गर्मी के लक्षण दिखाती हैं।

गर्भित कराने का उचित समय : पशु के गर्मी में रहने का समय 18–24 घंटे तक होता है और अंडा निकलने का समय मद काल के समापन के 10–12 घंटे बाद में होता है। अतः आवश्यक है कि पशु को गर्मी में आने के शुरूआत के करीब 10–12 घंटे बाद गर्भित करायें। पशु के मदकाल के आखिरी एक तिहाई समय में गर्भित कराना ज्यादा उपयुक्त होता है। इससे गर्भधारण की संभावना बढ़ जाती है। एक ही समय में कई बार गर्भित कराना प्रायः निरर्थक है।

कुछ पशुओं में मदकाल अर्थात गर्मी की अवधि 18–24 घंटे से बढ़कर 3 या 4 दिन तक भी देखने को मिलती है ऐसे पशुओं को भी मदकाल के आखिरी अवस्था में गर्भित कराना सार्थक होता है।

कुछ पशु समय से मद में नहीं आते, गर्भधारण नहीं करते अथवा बार–बार मद के लक्षण देते हैं ऐसे समस्याग्रस्त पशुओं के लिए पशुपालकों को निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए।

- पशु को अच्छे आहार के साथ–साथ 50–60 ग्राम उच्च गुणों वाला खनिज मिश्रण प्रतिदिन दें।

- यदि पशु अन्तः कृमियों से ग्रसित है तो पशु–चिकित्सक की सलाह से कृमिनाशक दवा दें।
- मद के लक्षण पहचान कर उचित समय पर गर्भित करायें।
- अगर किसी कारणवश मद का समय निकल गया हो तो 21वें दिन विशेष ध्यान रखें और समय से गर्भित करायें।
- अगर बच्चेदानी में कोई संक्रमण, सूजन, अण्डाशय पर सिस्ट अथवा पशु में हॉरमोन सम्बन्धी विकार हो तो पशु–चिकित्सक से तुरन्त सम्पर्क करें।
- मई से जुलाई माह का अत्यधिक तापमान संकर पशुओं एवं भैंसों में मद को बाधित करता है। अतः उच्च तापमान से बचाव के लिए पशुओं की पर्याप्त सुरक्षा करना चाहिए।
- कभी–कभी सुविधानुसार मादा पशुओं को नर पशुओं के साथ रखना चाहिए इससे उनकी प्रजनन क्रियाओं पर सकारात्मक मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है।

समुचित पोषण प्रबन्धन

हमारे यहाँ गाय–भैंस प्रजाति के सभी पशु मुख्यतः भूसा व धान के पुआल जैसे चारे पर निर्भर रहते हैं। यह चारे पशु चाव से नहीं खाते तथा इनसे पर्याप्त पोषक तत्व भी नहीं मिल पाता परिणामस्वरूप इन चारों पर पलने वाले पशु से उत्पादन तो दूर अपना सामान्य स्वास्थ्य बनाये रखना भी सम्भव नहीं हो पाता है।

पशुओं को स्वस्थ रखने तथा उनकी उत्पादन क्षमता बनाये रखने के लिए उनके आहार में विभिन्न पोषक तत्वों का होना अति आवश्यक है। इन तत्वों में मुख्यतः कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, खनिज तत्व व विटामिन का होना नितान्त आवश्यक है। हमारे पशु आहार में कार्बोहाइड्रेट की समस्या नहीं है लेकिन प्रोटीन, खनिज एवं विटामिन 'ए', 'डी', 'ई' व 'के' की विशेष कमी है। 'सी' तथा 'बी' श्रेणी के विटामिन इनके पेट में स्वतः बन जाते हैं।

बछिया एवं बछड़ों का पोषण : बछड़े के जन्म के तुरन्त पश्चात् उसे सर्वप्रथम खीस पिलानी चाहिए। जन्म के पश्चात् जो प्रथम दूध मिलता है उसे खीस कहते हैं। खीस की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका नवजात बछड़ों एवं बछियों की रोग प्रतिरोधक क्षमता कायम रखने में हैं। खीस में ऐन्टीबाडीज तथा विभिन्न प्रकार के प्रतिरक्षक पिण्ड विद्यमान होते हैं जो नवजात की संक्रामक रोगों से रक्षा करते हैं। नवजात को जन्म के 2–4 घण्टे के अन्दर ही खीस पिलाना अत्यन्त आवश्यक है। यदि किसी कारणवश खीस उपलब्ध नहीं हो तो बछड़े को दूसरी गाय की खीस भी पिला सकते हैं। यदि यह भी संभव न हो तो एक अण्डा, एक पाव शुद्व पानी, आधा चम्मच अरण्डी का तेल, आधा लीटर दूध में मिलाकर पिलाना चाहिए। प्रत्येक नवजात के शरीर भार के अनुसार प्रति 10 कि.ग्रा. भार पर 1 कि.ग्रा. खीस दिन में दो–तीन बार में देनी चाहिए। बछड़े एवं बछियों को खीस 15 दिन तक अवश्य पिलानी चाहिए। दो महीने की उम्र तक इनको कम से कम 1.50 ली. दूध प्रतिदिन देना चाहिए तथा इसके पश्चात् इसे कम करते हुए 1.0 ली. तक ले जाना चाहिए। लगभग एक महीने के पश्चात् नवजात को हरी घास भी खिलाना शुरू कर देना चाहिए। छः माह से एक वर्ष के बछड़े/बछिया को आधा कि.ग्रा. तथा एक से दो वर्ष को 1 से 1.50 कि.ग्रा. दाना मिश्रण देना चाहिए।

गर्भवती गाय एवं भैंस का पोषण : गायों का गर्भकाल लगभग 282 दिन तथा भैंस का 305 दिन का होता है। मादा पशु के शरीर में बच्चे का विकास गर्भकाल के प्रथम 6–7 महीने में धीमी गति से होता है पर अन्तिम 3 महीने में विकास बहुत तीव्रता से होता है। गर्भित पशुओं की देखभाल व उनके पोषण की तरफ ध्यान देना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि एक स्वस्थ बच्चे के लिए माँ के द्वारा ही उसको पोषक तत्व प्राप्त हो सकते हैं। गर्भित पशुओं को ब्याने से लगभग 60 दिन पहले दूध लेना बन्द कर देना चाहिए तथा 1–1.50 कि.ग्रा. दाना मिश्रण प्रतिदिन खिलाना चाहिए। ऐसे पशुओं को लंबी दूरी तक पैदल चलाना– टहलाना लाभप्रद होता है। ब्याने से पहले पशु की सामान्य खुराक में अतिरिक्त 60 ग्राम खनिज लवण और 100 मि.ली. कैल्शियम का घोल प्रतिदिन अवश्य देना चाहिए। पशुओं को ब्याने के पश्चात् आसानी से पचने वाला दाना जैसे गेहूँ का चोकर, गुड़ व हरा चारा देना चाहिए। ठंढा पानी नहीं पीने देना चाहिए।

दुधारू पशुओं का पोषण : दूध देने वाले पशुओं के आहार में दलहनी व गैर–दलहनी चारों के मिश्रण का समावेश होना चाहिए। पाँच लीटर तक दूध देने वाले पशुओं को केवल अच्छी प्रकार के हरे चारे पर रख कर दूध प्राप्त किया जा सकता हैं। पाँच लीटर से अधिक दूध देने वाले पशुओं को प्रति 2.0 या 2.50 लीटर दूध पर 1 कि.ग्रा. अतिरिक्त दाना देना चाहिए। दाने में एक भाग खली, एक भाग अनाज व एक भाग चोकर होने पर यह संतुलित व सस्ता रहता है। दाने में 2 प्रतिशत खनिज लवण व 1 प्रतिशत नमक का होना अत्यन्त आवश्यक है। बरसीम व अन्य दलहनी चारे को भूसे में मिलाकर देना चाहिए। इससे पशुओं में अफरा की समस्या नहीं रहती है। पशुओं को दाना व चारे को मिश्रित करके खिलाना चाहिए या दूसरे शब्दों में कहें तो सानी बना कर देना चाहिए। सानी बनाने से पूर्व इस बात का अवश्य ध्यान रखें कि चारे को कुट्टी के रूप में काट लिया जाय अन्यथा पशु अपनी इच्छा से चुन कर अपनी पसंद का भाग खा लेता है और मोटे या अधिक रेशे वाले टुकड़े को छोड़ देता है।

सूखी गाय एवं भैंसों का आहार : जो गाय या भैंस दूध नहीं दे रही है उनकी आहार की आवश्यकता न्यूनतम होती है। इस अवस्था में 6–8 घंटे चरने पर इनकी अधिकतम आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है। यदि चारागाह अच्छा नहीं है तो सूखे चारे के साथ 1–1.50 कि.ग्रा. दाना मिश्रण प्रति दिन देना चाहिए। इस प्रकार के पशु को यूरिया उपचारित भूसा खिलाने से दानों की बचत की जा सकती है।

पशु पोषण सम्बन्धित लाभप्रद जानकारियाँ

दुग्ध उत्पादन में लगभग 70 प्रतिशत लागत पशु आहार पर आता है। यदि पशुपालक दाना मिश्रण को मुख्य आहार बना कर दुग्ध उत्पादन करते हैं तो यह बहुत महंगा पड़ेगा। पशुओं को ज्यादा से ज्यादा हरा चारा खिलाना सबसे सस्ता एवं लाभप्रद तरीका है। इस सम्बन्ध में विभिन्न परिस्थितियों हेतु हरे चारे के साथ–साथ कुछ अन्य विकल्प सुझाये गये हैं।

1) हरा चारा खिलाना : किसान भाई गर्मी तथा वर्षा ऋतु में लोबिया व ग्वार (दलहनी) के साथ ज्वार, मक्का व बाजरा (गैर–दलहनी) तथा जाड़े में बरसीम (दलहनी) एवं जई, सरसों (गैर–दलहनी) चारा उगायें। उपलब्धता के आधार पर दलहनी तथा गैर–दलहनी चारों का मिश्रण (50:50) भर पेट, 2–3 कि.ग्रा. सूखे चारे के साथ मिलाकर खिलायें तो यह सबसे सस्ता एवं पौष्टिक आहार होगा। मई–जून एवं नवम्बर–दिसम्बर माह में हरे चारे की विशेष कमी होती है, अतः किसान भाई इसके पूर्व में उगाये गये अतिरिक्त हरे चारे को फूल निकलते समय काट लें तथा इसकी कुट्टी बनाकर छाया में अच्छी तरह सुखा लें जो अभावग्रस्त माह के लिए हरे चारे का विकल्प होगा। इसके अतिरिक्त निम्न स्तर के चारे को यूरिया द्वारा उपचारित कर पौष्टिक बनाया जा सकता है। जो गाय या भैंस प्रति दिन 5 लीटर दूध दे रही है उसे किसी दाने की आवश्यकता नहीं होती है। इसके साथ प्रति 2–2.5 लीटर अतिरिक्त दुग्ध उत्पादन पर 1 कि.ग्रा. संतुलित दाना मिश्रण दें।

2) यूरिया उपचारित आहार : यदि हरा चारा पर्याप्त मात्रा में नहीं है तो यूरिया उपचारित सूखा चारा दुग्ध उत्पादन हेतु एक अच्छा विकल्प है। उपचार के पश्चात् सूखे चारे में प्रोटीन की मात्रा 3–4 प्रतिशत से बढ़कर 7–8 प्रतिशत तक पहुँच जाती है। उपचारित चारा खिलाने से पशुओं के पेट में सूक्ष्म–जीवाणुओं की क्रियाशीलता और संख्या बढ़ जाती है। उपचारित चारों में रेशा नर्म और मुलायम हो जाता है तथा इसकी पाचकता बढ़ जाती है। उपचारित भूसा खिलाने से पशुओं के जीवन निर्वाह की सभी आवश्यकता सरलता से पूर्ण हो जाती है इसके अतिरिक्त दुधारू पशुओं से लगभग 3 लीटर दूध प्राप्त किया जा सकता है। इसके उपर प्रति 2–2.5 लीटर दूध पर 5–6 कि.ग्रा. हरा चारा (दलहनी–गैर दलहनी, 50:50) या 1 कि.ग्रा. संतुलित दाना मिश्रण खिलायें।

यूरिया उपचार विधि : 100 कि.ग्रा. सामान्य भूसे या सूखे फसल अवशेषों को 4 कि.ग्रा. यूरिया से उपचारित किया जाता है। 4 कि.ग्रा. यूरिया को 50 लीटर

पानी में घोल लेते हैं तथा 100 कि.ग्रा. भूसे पर अच्छी तरह छिड़क कर मिला लेते है। उपचारित भूसे को पैर से दबाकर पक्के फर्श अथवा पालीथीन के चादर पर चट्टे के रूप में ढेर बनाते हैं जिससे बीच की हवा निकल जाय फिर इसे अच्छी तरह ढ़ककर छोड़ देते हैं जिससे अमोनिया गैस बाहर न निकल सके। भूसा गीला होने पर भी यूरिया से उत्पन्न अमोनिया जैसे क्षार की उपस्थिति में खराब नहीं होता है। उपचारित चारे का प्रयोग गर्मी में उपचार के 7–10 दिन बाद तथा जाड़े में 10–15 दिन बाद शुरू किया जा सकता है। खिलाने के लिए आवश्यकतानुसार उपचारित भूसा बाहर निकालें। इसे कुछ समय के लिए खुला छोड़ दें जिससे अनावश्यक अमोनिया उड़ जाये। अनुमानतः एक वयस्क भैंस 12–15 कि.ग्रा. तथा गाय 10–12 कि.ग्रा. तक सूखा चारा खा सकती है। कम उम्र के बढ़ने वाले पशु को इसका आधा अथवा तीन चौथाई सूखे चारे की आवश्यकता होगी। इस आधार पर गणना करके पशुपालक एक साथ, एक सप्ताह के लिए सूखा चारा उपचारित कर सकते हैं जिससे नियमित उपचारित चारा पशुओं को मिलता रहे।

3) यूरिया–शीरा–खनिज ईंट : ऐसे पशु जो मात्र गेहूँ का भूसा अथवा पुआल पर निर्भर हों उनके लिए यह ईंट बहुत उपयोगी है। यह यूरिया, खनिज मिश्रण, सीमेन्ट, साधारण नमक व शीरा आदि मिलाकर बनाया जाता है। ये पशुओं को प्रमुख एवं सूक्ष्म खनिज लवण प्रदान करने के अतिरिक्त नाइट्रोजन व ऊर्जा प्रदान करता है। यह ईंट पशुओं के नॉद पर रख दिया जाता है तथा पशु अपनी इच्छानुसार इसे चाटता है। इसकी खपत प्रति दिन प्रति पशु लगभग 400 ग्राम तक है। साधारण सूखे चारे पर निर्भर रहने वाले दुधारू पशुओं में ईंट के प्रयोग से 250–300 ग्राम दूध उत्पादन प्रति दिन बढ़ाया जा सकता है जिस पर अतिरिक्त व्यय (ईंट की कीमत) मात्र 3 रू0 प्रति पशु प्रति दिन आता है। यही नहीं इस ईंट के लगातार प्रयोग से पशुओं के प्रजनन क्षमता में भी सुधार होता हैं अर्थात पशु समय से मद में आते हैं और गर्भधारण करते हैं। ऐसी स्थिति में यूरिया शीरा खनिज मिश्रित ईंट आवश्यक आहारिक तत्वों की पूर्ति कर निम्नस्तरीय चारों के उपयोग में सहायक सिद्ध होता है।

यूरिया–शीरा–खनिज ईंट

4) खनिज मिश्रण का प्रयोग : दुधारू पशुओं और ब्याने वाले पशुओं के आहार में खनिज मिश्रण पूर्ति हेतु विशेष ध्यान देना चाहिए। छोटे पशुओं को 15–25 ग्राम/दिन तथा बड़े पशुओं 50–60 ग्राम/दिन खनिज मिश्रण देने की आवश्यकता है। खनिज मिश्रण खरीदते समय इस बात का अवश्य ध्यान रखें कि यह आई.एस.आई. मार्क का होना चाहिए। ऐसे पशु जो बार–बार मद (गर्मी) में आते थे या आते ही नहीं थे, खनिज मिश्रण के प्रयोग से बहुत अच्छे परिणाम आए हैं। खनिज मिश्रण देने से पशुओं में गर्भधारण दर उन पशुओं की तुलना में अधिक पाया गया जिन्हें खनिज मिश्रण नहीं दिया गया था। खनिज मिश्रण (50–60 ग्राम) पर व्यय प्रतिदिन प्रति पशु लगभग 2.50 से 3.00 रूपये आता है लेकिन इससे लगभग 500 ग्राम दुग्ध उत्पादन बढ़ जाता है।

आवास प्रबन्ध

पशु पालक प्रायः पशु पोषण, चिकित्सा एवं प्रजनन पर तो ध्यान देते हैं लेकिन आवास व्यवस्था को नजरअंदाज कर देते हैं। उचित आवास न होने से पशुओं के उत्पादन एवं वृद्धि पर कुप्रभाव पड़ता है तथा संक्रामक बीमारियों का प्रकोप बढ़ जाता है। अधिक गर्मी एवं सर्दी में पशु अपनी ऊर्जा का प्रयोग वातावरण से जूझने में करता है जिससे उसकी वृद्धि दर एवं उत्पादकता दोनों प्रभावित होती है। उचित आवास हेतु निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए।

- हमारे यहाँ पशुओं को प्रायः बाँध कर पाला जाता है और कुछ समय के लिए सुविधानुसार चराने के लिए खोला जाता है अतः पशु गृह को ऊँचे स्थान पर बनाना चाहिए जहाँ जल निकास की समुचित व्यवस्था हो।

पशु आवास

- छत की ऊँचाई 2.5 मीटर से कम नहीं रखनी चाहिए जिससे ग्रीष्मकाल में छत की गर्मी पशुओं को प्रभावित न कर सके। याद रखें, यदि पशुशाला का तापमान 40^0 से. से ऊपर चला जाता है तो पशु मद में नहीं आएगा। इसलिए अधिक गर्मी के मौसम में पशुशाला की छत अगर पक्की हो तो उसके ऊपर घास–फूस, पराली आदि डालकर पानी का छिड़काव कर सकते हैं।
- छत किसी भी सस्ते तथा स्थानीय सामग्री से बनायी जा सकती है जिसका उद्देश्य पशु के आस–पास का तापमान 25^0 से 32^0 से. बनाये रखना है। इसके लिए दक्षिण–पश्चिम दिशा में ऊँचे छायेदार वृक्ष लगाये जा सकते हैं।
- पशु गृह की लम्बाई उत्तर–दक्षिण में रखना चाहिए जिससे पुरवा तथा पछुवा दोनों हवाओं का लाभ गर्मियों में मिल सके।

- सर्दी के मौसम में कुछ को छोड़कर अतिरिक्त खिड़कियों एवं दरवाजों को बन्द कर देना चाहिए जिससे पशुओं को सीधी सर्द हवा से बचाया जा सके।
- फर्श कठोर, फिसलन रहित तथा पानी न सोखने वाला होना चाहिए। सर्दी में फर्श पर धान की पुआल बिछाना चाहिए जिससे फर्श की ठंढक पशु को नुकसान न पहुँचा सके।
- कुछ लोग गर्मियों में, रात में पशुओं को बाहर तथा दिन में वृक्ष की छाया अथवा घर में जहाँ हवा का अवागमन ठीक हो वहाँ रख सकते हैं यह भी एक आरामदेय, सरल एवं सही तरीका है।
- पशु गृह में लगभग 2.50–4.0 वर्ग मीटर छाया तथा 7–8 वर्ग मीटर खुले स्थान की आवश्यकता प्रति वयस्क गाय या भैंस को होती है। बढ़ते जानवरों को आवश्यकतानुसार इसका आधा अथवा दो तिहाई जगह चाहिए। जो पशु दिन में चरने जाते है उन्हें यह खुला स्थान आवश्यक नहीं है।
- नाँद की लम्बाई लगभग 90 से.मी., चौड़ाई 50 से.मी. तथा गहराई 30–40 से.मी. रखनी चाहिए। जमीन से नाँद की ऊँचाई 80 से 85 से.मी. होनी चाहिए। छोटी उम्र के पशुओं में कम तथा साँड़ो के लिए यह नाप अधिक होनी चाहिए।
- खड़े होने के स्थान के पीछे 35 से.मी. चौड़ी एक नाली होनी चाहिए। फर्श तथा नाली का ढाल 2.5 से.मी. रखना चाहिए। पानी कहीं रूकना नहीं चाहिए साथ ही साथ गोबर एवं मूत्र का निकास भी आसानी से होना चाहिए।
- पशु के रहने के स्थान की सफाई का ध्यान देना बहुत ही आवश्यक है। पशुशाला आरामदेय हो, साफ हो और रोशनी का बन्दोबस्त हो। समस्त पशु आवास को समय–समय पर जीवाणु रहित करते रहना चाहिए जिससे बीमारी फैलाने वाले जीवाणु घर न बना सकें।
- पशुओं को नहलाने की अलग से व्यवस्था होनी चाहिए। पशुओं को नित्य नहलाने व खरेरा करने से रक्त संचार में वृद्वि एवं शरीर से धूल, टूटे बाल और त्वचा से निकले मल की सफाई होती है। साथ ही त्वचा से जूँ व अन्य परजीवियों को हटाया जा सकता है। दुधारू पशुओं को ग्रीष्मकाल में दो बार (सुबह–शाम) स्नान कराने से दुग्ध उत्पादन में 5 प्रतिशत की वृद्धि हो जाती है।
- बीमार एवं संक्रमित पशुओं को अलग रखने की व्यवस्था करनी चाहिए। अन्य तरह के पशुपालन जैसे मुर्गी, भेड़–बकरी, सूकर इत्यादि पशुगृह से दूर होना चाहिए।

बकरी पालन

उत्तर प्रदेश में बकरियों की संख्या लगभग 1.30 करोड़ है जिसमें 15.45 प्रतिशत बरबरी, 3.33 प्रतिशत जमुनापारी एवं शेष अवर्णित (देशी) प्रजातियाँ है। दूध, मांस व चमड़ा जैसी बहुमूल्य सामग्री बकरियों द्वारा प्राप्त होती है साथ ही ग्रामीण अंचलों में बकरी पालन के क्षेत्र में रोजगार की असीम सम्भावनायें व्याप्त हैं। यही कारण है कि प्रतिवर्ष 39.70 प्रतिशत बकरियों का उपयोग मांस के लिए करने के पश्चात इनकी संख्या 3.50 प्रतिशत की दर से बढ़ रही है। परन्तु अच्छी नस्ल, उचित आहारीय व्यवस्था एवं सही रख–रखाव के अभाव में इनका उत्पादन संतोषजनक नहीं है।

बकरी पालन की विशेषताएं

- बकरी पालन कम पूँजी (अर्थात कम संख्या, कम स्थान, सस्ता आवास, घर के बेकार खाद्य पदार्थों अथवा मात्र चराई आदि) से शुरू किया जा सकता है।
- बकरियाँ 10–12 माह में बच्चे देने योग्य हो जाती हैं तथा प्रायः एक से अधिक बच्चे देती हैं।
- बकरियाँ प्रत्येक जलवायु में अपने को आसानी से ढाल लेती हैं।
- बकरी का मांस सबसे अधिक लोकप्रिय है तथा इस पर कोई धार्मिक प्रतिबंध नहीं है बल्कि कुछ खास अवसर जैसे– होली, दुर्गापूजा एवं बकरीद आदि पर इसका महत्व बढ़ जाता है।
- बकरी पालन, भेड़ तथा गाय पालन की तुलना में 120 तथा 135 प्रतिशत क्रमशः अधिक लाभकारी है।
- एक बकरी प्रतिवर्ष लगभग 1000 रु0 शुद्ध लाभ देती है।
- एक बकरी प्रतिवर्ष लगभग 2 क्विंटल खाद उत्पन्न करती है।

बकरी पालन के महत्वपूर्ण तथ्य

1. उचित नस्ल का चुनाव : देश में बकरियों की लगभग 20 नस्लें हैं परन्तु उत्तर प्रदेश में दुग्ध उत्पादन हेतु जमुनापारी तथा मांस हेतु बरबरी, मूल प्रजातियाँ सर्वश्रेष्ठ है।

जमुनापारी : यह नस्ल मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश के इटावा जिले में पायी जाती है जो यमुना व चम्बल नदियों के कछार में स्थित है। जहाँ चराई की अच्छी सुविधा उपलब्ध होती है, वहाँ जमुनापारी अच्छी प्रकार पनपती है। यह बड़े आकार की बकरी है। इसका रंग प्रायः सफेद होता है। प्रथम बार गर्भ धारण करने में लगभग 1.50 वर्ष लग जाते हैं। यह प्रतिवर्ष एक बार में 1–2 बच्चे देती है। इस प्रजाति की बकरियाँ 190–200 दिनों के दुग्धकाल में लगभग 200 कि.ग्रा. दूध देती है अर्थात 1.0 कि.ग्रा. प्रतिदिन। वर्ष भर में इन बकरियों का शारीरिक भार 22–26 कि.ग्रा. तक हो जाता है।

जमुनापारी

बरबरी : यह मांस उत्पादन के लिए सर्वश्रेष्ठ प्रजाति है जो आगरा, एटा, मथुरा एवं अलीगढ़ जिलों में पाई जाती है। यह एक साल के अन्दर प्रजनन योग्य हो जाती है। बरबरी एक बार में 2–3 बच्चे तथा दो साल में तीन बार बच्चे देती है। इस तरह एक मादा प्रतिवर्ष लगभग 3.5 गुना की दर से वंश वृद्धि करती है। यह गुण देश के किसी अन्य प्रजाति में नहीं है। नर बच्चा एक साल में लगभग 15–18 कि.ग्रा. तक हो जाता है। मादा एक साल में लगभग 140 ली. दूध देती है। बरबरी प्रजाति को बाँधकर भी पाला जा सकता है।

बरबरी

2. **प्रजाति का सुधार :** बकरी पालक को चाहिए कि स्थानीय माँग के अनुसार अर्थात दूध के लिए जमुनापारी तथा मांस उत्पादन के लिए बरबरी नस्ल का पालन करें अथवा देशी प्रजाति को शुद्ध जमुनापारी या बरबरी से प्रजनन (क्रास) कराकर धीरे–धीरे अनुवांशिक सुधार करें। इसके लिए व्यवस्थित अथवा सरकारी फार्म से अच्छे गुणों वाला नर बच्चा क्रय करें। प्रति 20–25 बकरियों के लिए एक नर पर्याप्त होता है। एक साल बाद यह प्रजनन योग्य हो जाता है। उसके साथ के अन्य देशी नर बकरों को बेच दें अथवा बंध्याकरण करा दें ताकि अन्तः प्रजनन को रोका जा सके। इस तरह किसान अवर्णित नस्ल के समुदाय को कम खर्च द्वारा 2–3 वर्ष में वांछित नस्ल में परिवर्तित कर अधिक लाभ कमा सकते हैं।

3. **प्रजनन हेतु बकरे का चुनाव :** नस्ल सुधार में बकरे का योगदान आधा होता है। अतः समुदाय में सबसे स्वस्थ, निरोग, तेज वृद्धि दर, सुडौल शरीर, अधिक शारीरिक भार (वसा रहित) तथा फूर्तीले नर का चुनाव प्रजनन हेतु करना चाहिए। इसके अतिरिक्त नर का चुनाव करते समय इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि इसकी माँ एक समय में ज्यादा बच्चे देती हो तथा दो ब्यात के बीच कम से कम अंतराल रखती हो।

4. **आवास व्यवस्था :** आवास सदैव ऊँचे एवं सूखे स्थान पर बनायें जहाँ नमी अथवा पानी न रहता हो। प्रत्येक पशु को कम से कम 1.00 वर्ग मी. स्थान देना चाहिए। आवास तक सूर्य की रोशनी पहुँचनी चाहिये। मई–जून में अत्यधिक तापमान एवं दिसम्बर–जनवरी में अत्यधिक शीत से बचाव हेतु छायेदार वृक्ष तथा पर्दे आदि की व्यवस्था करनी चाहिए। बीमारी से बचाव हेतु नियमित मल–मूत्र की सफाई करते रहना चाहिए।

5. **प्रजनन व्यवस्था :** प्रजनन हेतु प्रति 20–25 मादा पर एक नर बकरा रखना चाहिए। बकरी पालक उचित रख–रखाव एवं आहार प्रबंधन करें ताकि बकरी ब्यात के पश्चात तीन माह के अंदर पुनः गर्भधारण कर ले जिससे दो साल में तीन ब्यात मिल सके। बकरियों में मद चक्र 18–21 दिन तथा मद अवधि 24–48 घंटे का होता है। मद के लक्षण आने के 12 घंटे पश्चात इनका प्रजनन कराना चाहिये। बकरी पालक इस बात का ध्यान दें कि गर्भित कराने के पश्चात उनकी बकरी में 18–21 दिन के बीच पुनः मद के लक्षण तो नहीं दिखाई दे रहा है। यदि ऐसा है तो पुनः गर्भित करायें। लेकिन बार–बार ऐसा हो तो पशु–चिकित्सक की सलाह लें।

6. **ब्यात के समय देखभाल :** बकरियों में गर्भकाल लगभग 145 दिन का होता है अतः गर्भावस्था के अन्तिम 60 दिन तक 200 ग्राम दाना मिश्रण प्रतिदिन दें। ब्यात के 7–10 दिन पूर्व बकरी को चराई पर न भेजें। एक बच्चा से दूसरा बच्चा पैदा होने के बीच लगभग 15–20 मिनट लगता है। बच्चा पैदा होने के कुछ देर पश्चात् जेर स्वतः गिर जाता है। यदि 8–10 घंटे तक जेर नहीं गिरता है तो पशु–चिकित्सक से सलाह लें। ब्यात के पश्चात् बकरी को नम एवं हल्का गर्म चोकर खाने को देना चाहिए।

7. **नवजात बच्चे की देखभाल :** बच्चे को बकरी का पहला दूध (खीस) 2–3 दिन तक अवश्य पिलायें। इससे बीमारियों से बचाव में मदद मिलती है। नाल पर टिंचर आयोडिन लगाते रहना चाहिए। बच्चे को दिन में तीन–चार बार दूध पिलाएँ। माँ के दूध के अभाव में गाय का दूध पिलाया जा सकता है। दो–तीन सप्ताह बाद मुलायम हरा चारा देना प्रारम्भ करें। तीन सप्ताह में नर बच्चे का बंध्याकरण कराए, इससे मांस की गुणवत्ता बढ़ जाती है तथा जो चमड़ा प्राप्त होता है उसमें कोई दुर्गंध नहीं होती है। दो माह बाद बच्चे को दूध देना आवश्यक नहीं है।

8. **आहार व्यवस्था :** यदि अच्छा चारागाह, झाड़ियाँ एवं पौष्टिक हरा चारा उपलब्ध हो तो दाना मिश्रण देना आवश्यक नहीं है। अन्य परिस्थितियों में बढ़ते बच्चे को 100 ग्रा. दाना मिश्रण, प्रजनन के मौसम में नर को 200 ग्रा., गर्भित बकरियों (अंतिम 60 दिन) को 200 ग्रा. तथा एक ली. दूध देने वाली बकरियों को प्रति दिन 250 ग्रा. दाना मिश्रण देना चाहिए। दाना मिश्रण बनाने के लिए कोई भी सस्ता अनाज 50–60 प्रतिशत, दाल चूनी 20 प्रतिशत, खली 25 प्रतिशत, गेहूँ का चोकर या चावल का पालिस 10 प्रतिशत, खनिज मिश्रण 2 प्रतिशत तथा साधारण नमक 1 प्रतिशत स्थानीय उपलब्धता के आधार पर चयन कर तैयार करें। बकरियों का धीरे–धीरे आहार परिवर्तन करें। अधिक रसीला चारा जैसे बरसीम, लूसर्न, लोबिया अधिक मात्रा में न खिलाएं इससे अफरा हो सकता है। सुबह अतिशीघ्र जब तक घासों पर ओस लगा हो तथा जलभराव क्षेत्रों में बकरियों को चरने न भेजें इससे अन्तः परजीवी का प्रकोप हो सकता है।

9. **स्वास्थ्य व्यवस्था :** बकरी पालक को हमेशा सतर्क रहना चाहिए कि कहीं उनकी बकरी बीमार तो नहीं है। बकरी का समुदाय से अलग रहना, चराई

नहीं करना, साथ–साथ न चल पाना, सुस्त एवं उतरा चेहरा, सर नीचे करके खड़े होना, शरीर का तापमान 103^0 फा. से ज्यादा होना, मुँह, नाक, कान, आँख अथवा मल–मूत्र के रास्ते खून, मवाद, कीचड़ आना आदि बीमारी के लक्षण हैं। ऐसी दशा में तुरंत पशु–चिकित्सक से सलाह लें।

- **न्यूमोनिया** : अत्यधिक ठंड एवं भारी वर्षा में यदि बकरी का रख रखाव ठीक से नहीं होता है तो न्यूमोनिया हो सकता है और यह बीमारी जानलेवा हो सकती है, क्योंकि न्यूमोनिया होने के पश्चात फेफड़े में जीवाणु, विषाणु एवं माईकोप्लाज्मा का संक्रमण तेजी से होता है। बकरियों को श्वॉस लेने में कठिनाई होने लगती हैं जिससे मृत्यु हो जाती है।

- **दस्त** : बकरियों में दस्त के कई कारण होते हैं। प्रायः दस्त परजीवियों, जीवाणु एवं विषाणु के संक्रमण से होता है। इसका मुख्य कारण दूषित आहार एवं जल ग्रहण करना है।

- **अफरा** : बकरियों में अफरा साधारणतया खान–पान में असावधानी के कारण होता है यदि बकरियाँ स्वभाव के अनुरुप कुछ अधिक खा लेती हैं, जैसे– मोटे अनाज, मक्का, गेहूँ, चावल, धान, बाजरा एवं हरा चारा जैसे– बरसीम, जई इत्यादि। ऐसी दशा में बकरियों के पेट के अन्दर जो गैस बनता है वह बाहर नहीं निकल पाता और अफरा हो जाता है।

उपर्युक्त स्वास्थ समस्याओं के लिए पशु–चिकित्सक से सम्पर्क करें।

- **टीकाकरण एवं परजीवी नियंत्रण** : इसका विस्तृत विवरण पशुओं के संक्रामक रोग के अन्तर्गत दिया जा चुका है।

सूकर पालन एक उभरता व्यवसाय

हमारे देश में सूकर पालन एक विशेष वर्ग द्वारा किया जाता है जबकि विदेशों में यह एक बड़ा व्यवसाय बन गया है। हाल के वर्षों में सूकर पालन में अनेक नवयुवकों ने रूचि दिखाई है तथा ग्रामीण क्षेत्रों में लाभ की प्रत्याशा में जगह–जगह पर सूकर फार्म भी खुल रहे हैं। हमारे देश में सूकरों की संख्या एवं मांस उत्पादन, विश्व की तुलना में बहुत कम है। इसका मुख्य कारण सामाजिक प्रतिबंध, उचित नस्ल एवं समुचित पालन पोषण का अभाव तथा कुछ खास बीमारियाँ है। इसलिए आवश्यक हो जाता है कि समाज के कमजोर वर्ग के आर्थिक उत्थान हेतु सूकर पालन को घरेलू व्यवसाय का रूप दिया जाये।

सूकर पालन की विशेषताएँ

- सूकर पालन कम पूँजी एवं कम स्थान से शुरू किया जा सकता है।
- सूकर पालन में लागत धन की वापसी शीघ्र (9–12 माह) होती है।
- सूकर में वंश वृद्धि शीघ्र एवं अधिकतम (8–12) होती है।
- सूकरों की शारीरिक वृद्धि 500–800 ग्रा./दिन होता है।
- सूकर में आहार उपयोग दक्षता (3.5 : 1) अधिक होती है।
- सूकर उत्पादन में मजदूरी पर कम व्यय (10 प्रतिशत) होता है।
- बेकार खाद्य पदार्थ को कीमती उत्पाद में परिवर्तित करने की अद्‌भुत क्षमता होती है।
- सूकर पालन में नस्ल सुधार की सम्भावना शीघ्र होती है।
- सूकर पालन कम क्षेत्रफल में किया जा सकता है।

सूकर पालन के गुर

- **नस्लों का चुनाव :** देशी सूकरों का शारीरिक भार विदेशी सूकरों की अपेक्षा आधा होता है। इनकी प्रजनन क्षमता जैसे – लैंगिक परिपक्वता, बच्चे का

जन्म दर भी विदेशी नस्लों की अपेक्षा बहुत कम होता है। इसलिए सूकर पालक को चाहिए कि वे लार्ज ह्वाइट यार्क शायर या लैंड्रेस नस्ल के सूकर पाले। यह नस्लें यहाँ के वातावरण के लिए उपयुक्त है। इस प्रजाति की मादा 8 माह में वयस्क हो जाती है तथा वर्ष के अन्दर प्रथम ब्यात, प्रति ब्यात 8–12 बच्चे, प्रतिवर्ष दो ब्यात तथा सभी प्रकार के खाद्य पदार्थों को पौष्टिक मांस में परिवर्तन की अधिकतम क्षमता (3.50 : 1) रखती है। इसके बच्चे एक वर्ष में 70–90 कि.ग्रा. तक शारीरिक वजन प्राप्त कर लेते हैं।

लार्ज ह्वाइट यार्क शायर

- **नस्ल सुधार :** विदेशी नस्ल के सूकर पालन से अधिक लाभ है अतः ऐसे सूकर पालक जो देशी नस्ल पाल रखे हैं किसी सरकारी या व्यवस्थित फार्म से इस प्रजाति के नर बच्चे लेकर प्रजनन द्वारा देशी नस्ल का सुधार करें। इस प्रकार प्राप्त संकर नस्ल के सूकर उष्मा एवं रोग प्रतिरोधी होते हैं तथा ग्रामीण परिवेश में भली–भाँति पाले जा सकते हैं।

- **सूकर आवास (बाड़ा) :** सूकर आवास के लिए पर्याप्त स्थान एवं पानी की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। आवास में हवा, प्रकाश एवं जल निकास की अच्छी व्यवस्था हो। मौसम के अनुसार आवास थोड़ा खुली छत वाला भी हो। फर्श पक्का तथा छत घास–फूस या खपरैल से बना सकते हैं। दीवार की ऊँचाई 4–5 फुट रखें।

- **सूकर आहार :** छोटे सूकर पालक प्रायः सूकरों को घर में रखकर नहीं खिलाते हैं उन्हें खुले खेतों, मैदानों में घुमाकर पालते हैं। सस्ते आहार हेतु घरों, होटलों का बचा भोजन एवं जूठन खिला सकते हैं। बेकार सब्जियाँ, फल, फलों के अवशेष, गेहूँ का चोकर, धान की भूसी, बेकार अनाज इत्यादि सूकर चाव से खाते हैं। सूकर को थोड़ी मात्रा में हरे मुलायम पत्तीदार सब्जियाँ एवं चारा भी दे सकते हैं। सूकर पालन बड़े पैमाने पर करने हेतु हर वर्ग के लिए अलग–अलग सन्तुलित आहार देना चाहिए जिसे सूकर–पालक स्वयं बना सकते है।

विभिन्न श्रेणी में सूकर–आहार संरचना (प्रतिशत)

खाद्य अवयव	शावकों (बच्चों) का आहार	बढ़ते सूकरों का आहार	वस्यक सूकरों का आहार
दरा मक्का	55–58	48–52	32–36
गेहूँ का चोकर/ चावल पॉलिस	18–22	20–24	40–45
मूँगफली की खली	14–16	18–20	14–16
मछली का चूरा	4–6	4–6	4–5
खनिज मिश्रण	2	2	2
साधारण नमक	1	1	1

सूकर रोग : सूकर पालकों को चाहिए कि सूकर ज्वर तथा खुरपका – मुँहपका से बचाव के लिए ढाई से तीन माह की आयु में टीकाकरण करें। अंतः परजीवियों के नियंत्रण के लिए पीपराजीन दवा 4 ग्रा./10 कि.ग्रा. आहार की दर से, आधा दाने में सुबह तथा आधा दाने में शाम को दें। दूसरे दिन 4 ग्रा. थायोवेंडाजॉल/ कि.ग्रा. आहार में मिलाकर देने से लार्वा व बड़े कृमि दोनों मर जाते हैं। दवा देने से पूर्व सूकरों को थोड़ा भूखा रखते हैं ताकि दवा मिश्रित आहार पूर्ण रूप से खा सकें।

सूकर के उपयोग

- सूकर वध से 80 प्रतिशत खाने योग्य मांस प्राप्त होता है जिसमें 15–20 प्रतिशत प्रोटीन होता है। इसके अलावा ऊर्जा, खनिज (फास्फोरस, लोहा) एवं विटामिन (थायमिन, रीबोफ्लेविन, नाईसिन, बी–12) प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं।
- लगभग 200–300 ग्रा. बाल प्रति सूकर प्राप्त होता है जिससे शेविंग, धुलाई, चित्रकारी के ब्रश, चटाईयाँ एवं पैराशूट के सीट बनाये जाते हैं।
- चर्म उद्योग में सूकर चर्म की अत्यधिक माँग है।
- सूकर चर्बी पशु आहार, मोमबत्ती, उर्वरक, शेविंग क्रीम, मलहम तथा रसायन बनाने के काम आता है।
- सूकर रक्त, चीनी शुद्ध करने, बटन, जूतों की पालिश, दवाईयाँ, सासेज, पशु आहार, खाद, वस्त्रों की रंगाई–छपाई हेतु प्रयोग किया जाता है।

- सूकर की अन्तःस्रावी ग्रंथियाँ जैसे एड्रीनल, पैराथायरायड, थायमस, पियूश ग्रंथि, अग्नाशय, थायरायड, पिनियल इत्यादि से मनुष्यों के लिए दवाइयाँ एवं इन्जेक्शन बनाये जाते हैं।
- सूकर से प्राप्त कोलेजन से औद्योगिक सरेस एवं जिलेटिन बनाया जाता है।
- हड्डियाँ, खुर व आंतों का प्रयोग कई तरह के औद्योगिक उत्पाद बनाने में किया जाता है।

सूकर की उपयोगिता को देखते हुए आवश्यक हो जाता है कि राज्य सरकार कमजोर वर्ग के उत्थान हेतु इस व्यवसाय को बढ़ावा दें। इसके लिए उन्नतशील नस्ल, आवश्यक टीके, दवाईयाँ, सस्ते आहार की उपलब्धता, मांस प्रसंस्करण इकाईयों की स्थापना तथा विपणन सुविधाओं पर ध्यान देना होगा।

मुर्गी पालन

मुर्गी पालन व्यवसाय हमारे देश में बहुत तेजी से आगे बढ़ रहा है और लाखों लोगों के रोजी रोटी का साधन बन गया है। गरीबी उन्मूलन एवं बेरोजगार नवयुवकों के लिए यह एक अच्छा व्यवसाय साबित हो रहा है। नार्बाड (एन.ए. बी.ए.आर.डी.) एवं अन्य लीड बैंक इस व्यवसाय को लोकप्रिय बनाने हेतु ऋण भी मुहैया करा रही हैं। लेकिन साधन सम्पन्न होते हुये भी, उत्तर प्रदेश में आवश्यकता के अनुरुप उत्पादन न होने के कारण आज भी दक्षिण भारत से अण्डे एवं मुर्गी के मांस की पूर्ति की जा रही है। अतः प्रदेश में मुर्गी उत्पाद को बढ़ाने के लिए निम्नलिखित घटकों पर ध्यान देना आवश्यक है।

उन्नतिशील प्रजातियाँ : आजकल अनुसंधान केन्द्रों एवं कुछ प्राइवेट संस्थाओं ने अंडे देने वाली ऐसी उन्नतिशील प्रजातियाँ विकसित की है जिनका उत्पादन 300 से अधिक अण्डों का है जो देशी मुर्गियों की अपेक्षा 4 से 5 गुना अधिक हैं। इसी तरह मांस वाली (ब्रॉयलर/क्रॉयलर) प्रजातियाँ 6 सप्ताह में 1.50 कि.ग्रा. मांस दे रही हैं। घर के पिछवाड़े मुर्गी पालन हेतु उपयुक्त प्रजातियाँ 150 अण्डे तथा उसके बाद 2.5–3.00 कि.ग्रा. मांस देने की क्षमता रखती हैं।

वनराजा प्रजाति

उदाहरणार्थ– केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, बरेली द्वारा विकसित कैरी–प्रिया, कैरी–सोनाली (अण्डे वाली प्रजाति), कैरी–श्यामा, कैरी–निर्भीक, कैरी–देवन्द्रा (घर के पिछवाड़े मुर्गी पालन हेतु) तथा कैरिब्रो धनराज एंव कैरिब्रो मृत्युंज्य (मांस वाली प्रजाति) उपयुक्त हैं।

संतुलित आहार : दूसरी समस्या संतुलित आहार की है। मुर्गी आहार का मुख्य भाग मक्का उत्तर प्रदेश में अधिक होता है लेकिन दूसरा भाग मूँगफली के खली का अभाव है हलाँकि, आजकल मुर्गियों का आहार अलग–अलग श्रेणियों के लिए विभिन्न कम्पनियों द्वारा व्यवसायिक स्तर पर बनाये जा रहे हैं और बाजार में उचित दाम पर उपलब्ध हैं।

आवृत तापक्रम नियंत्रण : उत्तर प्रदेश में मई–जून की अत्यधिक गर्मी (40^0 से अधिक) तथा दिसम्बर–जनवरी की ठंढ़क (15^0 से कम) भी मुर्गी की उत्पादकता को 20 प्रतिशत तक प्रभावित करती हैं इसलिए मुर्गी पालक को चाहिए कि मुर्गी घर के दक्षिण तथा पश्चिम दिशा में शहतूत (मलवारी) के वृक्ष लगायें जो गर्मी में छाया तथा जाड़े में पत्तियाँ गिर जाने के पश्चात् धूप दें। इसके अतिरिक्त पर्दे, पानी का छिड़काव, छत पर घास–फूस बिछाकर एवं आवश्यकतानुसार, खिड़कियों को खोलकर अथवा बन्द रखकर तापमान पर नियंत्रण करना चाहिए।

संक्रामक रोगों से बचाव : बचाव इलाज से कारगर है यह कहावत मुर्गी पालन में सटीक बैठती है अगर एक बार किसी बीमारी का संक्रमण हो गया तो पूरा समुदाय नष्ट हो सकता है। अतः इनसे बचाव के लिए टीकाकरण ही सबसे सस्ता एवं कारगर उपाय है।

टीकाकरण सारिणी

उम्र	टीका	खुराक / मात्रा	प्रयोग	प्रजाति
1–7 दिन	एच.बी.टी. स्ट्रेन (मार्क)	0.2 मि.ली. एक बूँद	गर्दन या आँख में	अंडे वाली प्रजाति के लिए
14 दिन	आई.बी.डी. इण्टरमिडिएट	,,	,,	अंडे व मांस दोनों प्रजातियों के लिए
28 दिन	आई.डी.एफ. लसोटा	,,	,,	,,
35 दिन	आई.बी.डी. इण्टरमिडिएट	,,	,,	,,
42 दिन	चेचक	,,	पंखे के नीचे मांस में	अण्डे वाली प्रजाति के लिये
8–10 सप्ताह	आर.डी.–2 बी. स्ट्रेन	0.5 मि.ली.	मांस में	,,
18 सप्ताह	ई.डी.एस.–76	,,	,,	,,
20 सप्ताह	आर.डी. इनएक्टीवेटेड	,,	,,	,,

अन्य रोगों से बचाव

1. सफेद दस्त/बैसिलरी व्हाईट डायरिया/प्लुलोरम बीमारी : यह रोग मुख्यतः चूजों में होता है, जिससे काफी अधिक संख्या में चूजों की मृत्यु होती है। बाद में यह बड़ी मुर्गियों में भी फैलता है। रोग से ग्रसित मुर्गियों के अंडों में भ्रूण मर जाते है। रोगी मुर्गियों की बीट चूने जैसी सफेद होती है तथा मल विसर्जन के समय दर्द होता है, कुछ पक्षी अंधे या लंगड़े भी हो जाते हैं। चूजे एवं मुर्गियों का पिछला भाग दस्त के कारण चिपक जाता है।

उपचार

क) टेट्रासाइक्लिन/लिक्सेन/फयूरासोल पाउडर दवा : यह दवा सभी पशु दवा दुकान में उपलब्ध रहती है। 20 चूजे अथवा 5 बड़ी मुर्गियों के लिये एक कप पानी (50 मि.ली.) में 2 चुटकी (2 ग्राम) दवा घोलें एवं सिरिंज द्वारा बीमार चूजों को दो–दो बूंद एवं बड़ी मुर्गियों को पांच–पांच बूंद तीन दिनों तक लगातार पिलाने से बीमारी दूर की जा सकती है। पीने के पानी में दवा घोलकर भी पिलायी जा सकती है। इस पद्धति में 40 चूजे अथवा 10 बड़ी मुर्गियों के लिए एक तसला पानी (1 लीटर) में 4 चुटकी (4 ग्राम) दवा मिलाकर मुर्गी घर में रखे पानी बर्तन में दवा डाल दें एवं प्रभावित चूजे या मुर्गियों को अपनी इच्छानुसार इस पानी को पीने दें। ऐसा तीन दिनों तक करें।

रोकथाम : बिछौना, मुर्गीघर एवं उसके आस पास की जगह की साफ सफाई का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए। टेट्रासाइक्लिन पाउडर/लिक्सेन पाउडर/फयूरासोल पाउडर–उपर बतायी गयी दवा को आधी मात्रा में पीने वाले पानी में देने से इसकी रोकथाम की जा सकती है।

2. खूनी पेचिश/खूनी दस्त/कॉक्सीडियोसिस : यह रोग मुख्यतः पक्षी रखने के स्थान पर नमी के कारण होता है। सबसे प्रमुख लक्षण खूनी दस्त होता है। प्रभावित चूजे खाना नहीं खाते हैं, पंखों को नीचे झुकाकर रखते हैं, कलगी का रंग भूरा होने के साथ–साथ, अंडोत्पादन कम हो जाता है। इस रोग से चूजे काफी कमजोर हो जाते हैं एवं आँख मूंदकर बैठ जाते हैं। इस बीमारी से काफी बड़ी संख्या में पक्षियों की मृत्यु हो जाती है। यह रोग पक्षियों को करीब तीन सप्ताह की आयु में लगता है जो बाद में बड़ी मुर्गियों में भी फैलता है।

उपचार : कॉक्सीडिया रोधक दवायें जैसे एम्प्रोसोल, सल्फाक्वीनॉक्सेलिन, सल्फामीराजीन आदि बाजार में उपलब्ध है। दवा को उपर दर्शायी गई मात्रा के अनुसार दाने में मिलाकर तीन दिनों तक प्रभावित मुर्गियों को देना चाहिए। साथ–साथ विटामिन एवं खनिज मिश्रण को पानी में मिलाकर देने से भी रोग को नियंत्रित किया जा सकता है।

रोकथाम : इस रोग की रोकथाम के लिए मुर्गियों का बिछावन या मुर्गी घर का फर्श सूखा तथा साफ रखना चाहिए। बिछावन गीली होने पर चूना मिलाकर बिछावन को पलट देना चाहिए। उपरोक्त औषधियों में से किसी एक को दाना में मिलाकर या पीने के पानी में मिला कर पिलाए। दवा युक्त पानी के साथ सादा पानी न दें। रोकथाम के लिए 2–3 माह तक या जब तक आवश्यकता हो, दवा देनी चाहिए।

3. मुर्गियों में सर्दी जुकाम : ठंड के समय, वर्षा में भीगने पर या खुले में बाहर रहने पर मुर्गियों को खास कर चूजों को यह बीमारी हो जाती है। मुर्गियों का सुस्त रहना, कलगी में नीलापन, दाना पानी कम खाना एवं चोच से पतला स्राव आना प्रमुख लक्षण है। चूजे एवं मुर्गियाँ पास–पास आकर झुंड बना लेते हैं। इससे यह बीमारी और भी फैलती है।

उपचार : टेट्रासाइक्लिन, स्टेक्लिन आदि की 1/4 टैबलेट सुबह–शाम खिलावें। सल्फाडिमीडीन (16 प्रतिशत घोल) 10 मि.ली., 1 लीटर पानी में मिलाकर पिलावें।

रोकथाम

- मुर्गियों को ठंड से बचाना चाहिए। आवश्यकता होने पर 60–100 वाट का बल्ब मुर्गीघर में जलाना चाहिए। इससे कमरा गर्म रहता है।
- उपरोक्त वर्णित टेट्रासाइक्लीन दवा को इस बीमारी की रोकथाम या तीव्रता को कम करने में उपयोग किया जा सकता है। उक्त मुर्गियों को 3 माह में एक बार, 2–3 दिन तक लगातार दवा पिलाना चाहिए।

औषधियों	रोकथाम	विधि
बाईफुरान टेबलेट	1/4 टेबलेट	1 लीटर पानी
कॉड्रीनल पाउडर	1 ग्राम	1 लीटर पानी
एम्प्रोसोल 20 प्रतिशत	30 ग्राम	100 लीटर पानी

चारा उत्पादन तकनीकि

दुधारू पशुओं को वर्ष भर हरा चारा खिलाना आर्थिक रूप से सबसे सस्ता विकल्प है। मानसून से पहले (मई–जून) तथा मानसून के बाद में अर्थात नवम्बर–दिसम्बर में हरे चारे की बहुत कमी होती है जबकि मानूसन मौसम (जुलाई–अगस्त) एवं जाड़े (फरवरी से अप्रैल माह) में हरे चारे की अधिकता होती है। अतएव दुग्ध उत्पादन को स्थिर रखने के लिए वर्ष भर हरा चारा उत्पादन करना ही एक टिकाऊ माध्यम है।

गर्मी तथा वर्षा के मौसम में ज्वार, बाजरा, मक्का, एम.पी. चरी, सूडान, संकर लोबिया तथा सर्दी में बरसीम, जई, सरसों, गाजर, शलजम, चाइनीज कैबेज आदि उगा सकते हैं। आवश्यकतानुसार छोटे–छोटे क्षेत्रफल में 1–1 माह के अन्तराल पर बुआई करने से वर्ष भर हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। दलहनी तथा गैर–दलहनी चारा मिलाकर भी उगाया जा सकता है।

प्रमुख चारा फसलों की उत्पादन तकनीकि

(1) बरसीम

यह रबी में उगाई जाने वाली चारा की प्रमुख फसल है। इससे चार से छः कटाईयाँ प्राप्त की जा सकती है। बरसीम से लम्बे समय तक चारा मिलता है तथा यह प्रोटीन से भरपूर होती है।

बरसीम (वरदान प्रजाति)

भूमि की तैयारी एवं बुआई : खेत को समतल बनाकर 3–4 जुताइयों के पश्चात् मिट्टी अच्छी तरह तैयार करें। खेत में पानी भरकर, 1–1.5 से.मी. खड़े पानी में बीज का छिड़काव करें।

खाद एवं उर्वरक : गोबर की खाद 8–10 टन, नत्रजन 8 कि.ग्रा. (यूरिया 18 कि.ग्रा.), फास्फेट 32 कि.ग्रा. (सिंगल सुपर फास्फेट 200 कि.ग्रा.) प्रति एकड़।

उन्नत प्रजातियाँ : वरदान, बुन्देल बरसीम–2 तथा 3, बी.एल.–10, मस्कावी।

बीज दर : 10 से 12 कि.ग्रा. प्रति एकड़ (बीज को राइजोबियम कल्चर द्वारा उपचारित कर बुआई करने से पैदावार अधिक होगी)।

बुआई का समय : 20 सितम्बर से 10 अक्टूबर

सिंचाई : सिंचाई भूमि की किस्म एवं मौसम की स्थिति के अनुसार करना चाहिए। पहली हल्की सिंचाई एक सप्ताह बाद करें। इसके बाद 15 से 20 दिन के अंतर पर पानी देना चाहिए। कुल 15 से 16 सिंचाईयों की आवश्यकता पड़ती है।

कटाई : बोने के 40 दिन बाद पहली कटाई, इसके बाद प्रत्येक 30 दिन के बाद कटाई करें।

उपज : मार्च तक हरा चारा लेने के बाद यदि बीज के लिए फसल छोड़ दें तो 360 से 400 कुन्टल हरा चारा एवं 1.0 से 1.5 कुन्टल बीज प्रति एकड़ प्राप्त हो जाता है।

(2) जई

जई रबी का मुख्य अनाजीय चारा है। इसकी खेती हमारे यहाँ सफलतापूर्वक की जा सकती है।

भूमि की तैयारी एवं बुआई विधि : अच्छी प्रकार जुताई करके तैयार भूमि में हल के पीछे, लाइन से लाइन की दूरी 20–25 से.मी. पर बुआई करें।

खाद : नत्रजन 16, 14 तथा 12 कि.ग्रा. (यानी यूरिया 35, 30 तथा 27 कि.ग्रा.) क्रमशः बोते समय, एक माह बाद तथा पहली कटाई के बाद तथा फास्फेट 16 कि.ग्रा. (सिंगल सुपर फास्फेट 100 कि.ग्रा.) बोते समय प्रति एकड़।

उन्नत किस्में : जे.एच.ओ. 851, 822, 99–2, 2004, 90–1, केन्ट

बुआई का समय : अक्टूबर–नवम्बर (बुआई का सर्वोत्तम समय 20 अक्टूबर से 10 नवम्बर)

सिंचाई : बुआई के समय खेत में पर्याप्त नमी का होना अत्यन्त आवश्यक है इससे जमाव अच्छा होता है। पहली सिंचाई, बुआई के 21 दिन पर, दूसरी 45 दिन, तीसरी 60 दिन तथा चौथी 80 दिन पर करनी चाहिए।

कटाई : पहली कटाई 55 दिन पर, तत्पश्चात दूसरी कटाई 35 से 40 दिन बाद। अधिक कटाई के लिए बाल बनने की अवस्था के पहले काट लेना चाहिए।

उपज : 160 –200 कुन्टल प्रति एकड़ हरा चारा। अच्छा प्रबन्ध होने पर 220 से 240 कुन्टल हरा चारा तथा 4.8 से 6 कुन्टल बीज प्रति एकड़ (यदि पहली कटाई के बाद बीज के लिए छोड़ें) प्राप्त किया जा सकता है।

(3) सरसों

यह कम समय में तैयार होने वाली चारे की फसल है और लगभग 50 दिनों में तैयार हो जाती है, इसका चारा मुलायम एवं पौष्टिक होता है।

भूमि की तैयारी : सरसों के लिए दोमट एवं वलुई दोमट सर्वोत्तम है। तीन चार जुताई कर खेत तैयार करें। सरसों आंशिक अम्लीय एवं क्षारीय भूमि में उगाई जा सकती है।

खाद एवं उर्वरक : गोबर की खाद 5–6 टन, नत्रजन 16 कि.ग्रा. (यूरिया 35 कि.ग्रा.) बोते समय तथा 8 कि.ग्रा. (यूरिया 18 कि.ग्रा.) एक माह बाद तथा फास्फेट 8 कि.ग्रा. (सिंगल सुपर फास्फेट 50 कि.ग्रा.) बोते समय देना चाहिए।

उन्नत प्रजातियाँ : जापानी सरसों, टी–16, इग्फ्री, आई.एम.–98, आई.एम.–100

बुआई का समय : 20 सितम्बर से 10 अक्टूबर तक

बीज दर : 2.5 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ कतारों में बोने पर तथा 3.50 कि.ग्रा. प्रति एकड़ छिड़कवॉ विधि से।

सिंचाई : पहली सिंचाई तीन से चार सप्ताह के बाद, अन्य 20 दिन के अंतर पर करनी चाहिए।

कटाई : 40 से 50 दिन पर

उपज : 100 से 120 कुन्टल प्रति एकड़ हरा चारा प्राप्त होता है।

(4) कई कटान वाली ज्वार

खरीफ में ज्वार की खेती से 80–85 प्रतिशत हरा चरा प्राप्त होता है। ज्वार में सूखा सहन करने की क्षमता अन्य फसलों की अपेक्षा अधिक होती है। इसमें चार कटाईयाँ संभव है।

भूमि की तैयारी : उचित जल निकास वाली मटियार से वलुई दोमट भूमि के लिए दो जुताई काफी होती है। बुआई के समय मिटट्री मुलायम एवं भुरभुरी होनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक : नत्रजन 16 कि.ग्रा. (यूरिया 35 कि.ग्रा.) बोते समय, 14 कि. ग्रा. (यूरिया 31 कि.ग्रा.) एक माह बाद तथा 16 कि.ग्रा. (यूरिया 35 कि.ग्रा.) प्रत्येक कटान के बाद प्रति एकड़ प्रयोग करना चाहिए।

उन्नत प्रजातियाँ : एस.एस.जी.–988, एस.एस.जी.–855, पी.सी.–29, एम.पी.चरी।

बुआई का समय : सुविधानुसार मार्च से अगस्त तक कभी भी बोया जा सकता है।

बीज दर : 12–14 कि.ग्रा. प्रति एकड़।

विधि : हल के पीछे कूड़ों में 25 से.मी. की दूरी पर।

कटाई : 50 प्रतिशत फूल आने तक की अवस्था कटाई के लिए सर्वोत्तम होती है। चार कटाईयाँ जैसे पहला कटान 50 दिन बाद, उसके बाद 40 दिन के अन्तराल पर।

उपज : हरा चारा 500–600 कुन्टल प्रति एकड़।

(5) एक कटान वाली ज्वार

भूमि की तैयारी : उचित जल निकास वाली मटियार से वलुई दोमट भूमि के लिए दो जुताई काफी होती है। बुआई के समय मिटट्री मुलायम एवं भुरभुरी होनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक : नत्रजन 16 कि.ग्रा. (यूरिया 35 कि.ग्रा.) बोते समय तथा 14 कि.ग्रा. (यूरिया 30 कि.ग्रा.) एक माह बाद। फास्फेट 13 कि.ग्रा. (सिंगल सुपर फास्फेट 80 कि.ग्रा.) बोते समय प्रति एकड़।

बुआई का समय : जून–जुलाई

उन्नत किस्में : पी.सी.–6, एच.सी.–136

बीज दर : 16 कि.ग्रा. प्रति एकड़ अगर इसके साथ लोबिया मिलाकर बोना हो तो 13 कि.ग्रा. ज्वार और 16 कि.ग्रा. लोबिया प्रति एकड़ बीज का प्रयोग करें।

उपज : 160 कुन्टल प्रति एकड़।

(6) मक्का

भूमि की तैयारी : उचित जल निकास वाली मटियार से वलुई दोमट भूमि के लिए दो जुताई काफी होती है। बुआई के समय मिटट्री मुलायम एवं भुरभुरी होनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक : गोबर की खाद 8–10 टन प्रति एकड़, नत्रजन 24 कि.ग्रा. (यूरिया 52 कि.ग्रा.) बोते समय, 16 कि.ग्रा. (यूरिया 35 कि.ग्रा.) एक माह बाद, फास्फेट 13 कि.ग्रा. (सिंगल सुपर फास्फेट 80 कि.ग्रा.) बोते समय प्रति एकड़। जहाँ जस्ते की कमी हो वहाँ बुआई के समय 8 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट भी मिट्टी में मिलाना चाहिए।

बुआई : मार्च से अगस्त तक, देशी हल के पिछे लाइनों में (25 से.मी. की दूरी पर) बुआई करें।

बीज दर : 20–24 कि.ग्रा. प्रति एकड़

उन्नत प्रजातियाँ : अफ्रीकन टाल, गंगा सफेद–2, गंगा–5, गंगा–6 चारे के लिए उपयुक्त है।

सिंचाई : जायद की फसल में 12 से 15 दिन के अंतराल पर, बरसात में आवश्यकतानुसार, रबी की फसल में 15 से 20 दिन के अंतराल पर।

कटाई : फसल की कटाई, सूतबाल निकलने से पहले कर लेना चाहिए।

उपज : हरा चारा 140–160 कुन्टल प्रति एकड़।

(7) लोबिया

लोबिया एक अच्छी दलहनी फसल है एवं खरीफ में मुख्य रूप से सब्जी एवं चारे के रूप में उगायी जाती है। पशुओं के चारे के रूप में लोबिया एक पौष्टिक आहार है।

भूमि की तैयारी : उचित जल निकास वाली मटियार से वलुई दोमट भूमि के लिए दो जुताई काफी होती है। बुआई के समय मिट्टी मुलायम एवं भुरभुरी होनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक : बुआई के समय बीज के नीचे कूड़ों में 8 से 10 कि.ग्रा. नत्रजन (20 कि.ग्रा. यूरिया) व 24 कि.ग्रा. फास्फोरस (सिंगल सुपर फास्फेट 150 कि.ग्रा.) प्रति एकड़ देना चाहिए।

उन्नत किस्में : बुन्देल लोबिया –1, 2, 3; आई.जी.एफ.आर.आई.–450 (कोहिनूर), ई.सी.–4216, एन.पी.–3, रसियन जाइंट।

बुआई का समय : मार्च से मध्य अगस्त उपयुक्त होता है। देशी हल से पोरा विधि द्वारा 2–3 से.मी. गहराई पर 25 से.मी. लाइन से लाइन की दूरी पर बोना चाहिए।

बीज दर : 16–20 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़। मिलवा बोने पर दोनों फसलों का आधा–आधा बीज करके दो–दो लाइन के अंतर पर बोना चाहिए। बीज को राइजोबियम कल्चर से उपचारित करना चाहिए।

कटाई : लोबिया की अधिकांश प्रजातियों में केवल एक कटाई की जा सकती हैं, परन्तु रसियन जाइंट, कोहिनूर में दो कटाईयाँ की जा सकती है। 120 से 140 कुन्टल तथा दो कटाईयों से 140–180 कुन्टल प्रति एकड़ हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है।

(8) संकर हाथी घास (नेपियर)

यह कई कटाईयाँ देने वाला बहुवर्षीय चारा है। बहुवर्षीय होने के कारण एक बार लगाने से तीन–चार वर्ष तक चारे की अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

संकर नेपियर

भूमि की तैयारी : उचित जल निकास वाली मटियार से वलुई दोमट भूमि के लिए दो जुताई काफी होती है। रोपाई के समय मिट्टी मुलायम एवं भुरभुरी होनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक : गोबर की खाद 80–100 कुन्टल, नत्रजन 20 कि.ग्रा. रोपाई से पहले तथा 20 कि.ग्रा. प्रति कटाई पर देना चाहिए।

उन्नत किस्में : इग्फ्री नं.–3, नं.–6 एवं नं.–10

बुआई का समय : फरवरी में नेपियर घास के तनों के टुकड़े एवं बरसात में घास की जड़े खेत में लगाये।

तना या जड़ : तनों के टुकड़े या घास की जड़े, संख्या 8,000 प्रति एकड़।

विधि : लाइन से लाइन की दूरी एक मीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी आधा मीटर। नेपियर घास के लगाते समय इस बात का ध्यान रखें कि घास के तने के टुकड़े में दो गांठ अवश्य होना चाहिए एवं लगाते समय निचली गांठ जमीन के अन्दर तथा उपरी गांठ जमीन के बाहर हो।

कटाई : पहली 60 दिन बाद, अन्य 40 दिन के अंतराल पर

उपज : 480 से 720 कुन्टल प्रति एकड़ प्रति वर्ष हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है।

बीज स्रोत : भारतीय चारागाह एवं चारा अनुसंघान संस्थान, झाँसी–284003, राज्य कृषि विश्वविद्यालय एवं राष्ट्रीय बीज निगम।

मिश्रित चारा खेती

1. खरीफ में ज्वार/मक्का/बाजरा आदि के साथ, लोबिया/ग्वार आदि लगाकर अच्छी पैदावार एवं पौष्टिक हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है।
2. रबी में बरसीम व सरसों या बरसीम व जई को मिलाकर भी अंतः फसल लगाई जा सकती है। ध्यान रहे मिलवा खेती में बीज की मात्रा कुल मात्रा की आधी रह जाती है।

उपयोगी चारा वृक्ष

सड़क, नहर के किनारे तथा बेकार भूमि में चारा वृक्ष जैसे देशी बबूल, सुबबूल, इजराइली कीकर (बबूल), सफेद सिरस, काला सिरस, नूतन, अगस्ती, कचनार, अंजन वृक्ष, करधई, नीम, पीपल, बरगद आदि लगाकर आपातकाल एवं सूखे की स्थिति में चारा प्राप्त किया जा सकता है।

संक्रामक रोग

हमारे देश में संक्रामक रोगों के कारण प्रत्येक वर्ष बड़ी संख्या में पशुओं की मृत्यु हो जाती है तथा जो इन बीमारी से बच जाते हैं, उनकी उत्पादन क्षमता कम हो जाती है। प्रमुख संक्रामक बीमारियों के उपचार की अपेक्षा टीकाकरण सबसे सस्ता एवं कारगर उपाय है।

बीमार पशुओं की सामान्य पहचान

- पशु की गति, चाल, व्यवहार तथा हाव भाव में परिर्वतन आना।
- चारा न खाना, जुगाली न करना तथा अन्य पशुओं से अलग रहना।
- दुग्ध उत्पादन में गिरावट आना।
- कान तथा गर्दन नीचे करके खड़े रहना।
- सुस्त रहना, बाल खड़े, त्वचा का सूखापन तथा लचीला न होना।
- शारीरिक तापक्रम, नाड़ी गति एवं श्वास गति में परिर्वतन होना।
- आँख, नाँक, व मुँह से द्रव्यों का बहना।
- अधिक पतला अथवा कड़ा गोबर होना।
- आँखों से कीचड़ आना।
- मद चक्र समय पर न आना।
- शुष्क थूथना।
- लंगड़ा कर चलना।
- वजन गिरना अथवा वृद्धि रूक जाना।

पशुओं के प्रमुख संक्रामक रोग

गला घोंटू (एच.एस.) : यह रोग पशुओं को बरसात में अधिक होता है इस बीमारी में पशु को तेज बुखार होता है और वह खाना–पीना छोड़ देता है।

धीरे–धीरे गले में सूजन हो जाती है। सूजन के कारण साँस लेने में परेशानी होने लगती है। जिसके कारण पशु मुहँ खोलकर साँस लेते हैं और घर्र–घर्र की आवाज होती है। बचाव के लिए 3 माह के ऊपर के सभी पशुओं को वर्ष में एक बार टीकाकरण कराया जाना चाहिए। उपचार हेतु पशु–चिकित्सक से सलाह लें।

खुरपका–मुँहपका रोग (एफ.एम.डी.) : यह बीमारी गाय, भैंस में बड़ी शीघ्रता से फैलती है तथा एक प्रकार के विषाणु से उत्पन्न होती है। यह रोग गाय, भैंसों के अतिरिक्त भेड़, बकरियों व सूकरों में भी होती है। इस बीमारी में जीभ के नीचे मसूड़ों, थनों तथा खुरों में छोटे आकार के छाले/फफोले पड़ जाते हैं। पशुओं को तेज बुखार होता है व जुगाली करना बन्द कर देते हैं। दूध उत्पादन भी कम हो जाता है। पशुओं के मुँह से लार गिरने लगता है। थनों पर छालों से कभी–कभी थनैला की बीमारी भी हो सकती है। बछड़ों में यह बीमारी घातक रूप ले लेती है जिससे मृत्यु हो जाती है। गाभिन पशुओं में गर्भपात भी हो सकता हैं।

लंगड़ी (ब्लैक क्वार्टर) : यह रोग गाय एवं भैंसो में जीवाणु से होता है। यह बीमारी भी बरसात के समय अधिक होती है विशेष रूप से छोटी उम्र के पशुओं में। कभी–कभी अगले पैरों की मांसपेशियाँ सूज जाती हैं तथा काले रंग की हो जाती हैं जिसे दबाने पर किड़किड़ की आवाज आती है। पशु चलने में काफी परेशानी महसूस करता है। पशु को तेज बुखार हो जाता है ऐसे पशुओं का गोबर सफेद झिल्ली से ढका रहता है। उचित समय पर इलाज न मिलने पर पशु अत्यधिक कष्ट का अनुभव करता है तथा पशु की मृत्यु भी हो सकती है।

प्लीहा/ तिल्ली या बागी रोग (एन्थ्रैक्स) : यह रोग जीवाणु से होता है तथा अति तीव्रता से बढ़ने वाला यह छूत का रोग है। यह रोग पालतू जानवरों जैसे गाय, भैंस, भेंड़, बकरी, घोड़ा आदि के अतिरिक्त इन पशुओं के संसर्ग में रहने वाले मनुष्यों को भी हो जाता है। इसका जीवाणु (बैसिलस एन्थ्रेसिस) वर्ष पर्यन्त मिट्टी, गोबर, चमड़े व हड्डियों में जीवित रहता है। उचित वातावरण मिलने व रोगी पशुओं के सम्पर्क में आने पर स्वस्थ पशु भी बीमारी से संक्रमित हो जाते हैं। यदि कोई पशु अधिक ज्वर से मर जाये और मरने के बाद उसके शरीर के प्राकृतिक गुहाओं से रक्तस्राव होता रहे तो पशु को प्लीहा रोग होने की सम्भावना रहती है। कभी–कभी ऐसा भी देखा जाता है कि जानवर की कुछ ही

घण्टों में मृत्यु हो जाती है परन्तु किसी–किसी जानवर में यह बीमारी कई दिनों तक रहती है। इस प्रकार के रोग ग्रसित जीवित पशुओं की चिकित्सा अवधि में विशेष सावधानी बरतनी पड़ती है क्योंकि ऐसे संक्रमित पशुओं से स्वस्थ पशुओं एवं मनुष्यों में भी रोग फैलने की सम्भावना बनी रहती है।

भेड़ एवं बकरियों में अनेक प्रकार के रोग होते हैं जिसके कारण पशुपालक को आर्थिक हानि होती है। कई बार अन्य रोगग्रस्त पशुओं से भी समुदाय में रोग फैल जाता है। साफ–सफाई का विशेष ध्यान रखें तथा भेड़–बकरियों के पोषण में कमी न होने दें। एक ही स्थान पर अधिक संख्या में भेड़–बकरियों को चरने से न केवल घास समाप्त होती है बल्कि उनके मल–मूत्र से चारागाह भी दूषित हो जाता है जिसके कारण परजीवियों का संक्रमण बढ़ जाता है जो दस्त व अन्य रोगों को जन्म देते हैं। चरने वाली भेड़–बकरियों में रोग के लक्षण जानने के लिए हर सुबह बाड़े का निरीक्षण एक बार अवश्य करना चाहिए।

प्लेग/पी.पी.आर. (पेस्टी डेस पेटिट्स ऑफ रूमीनेंट) : यह रोग सभी उम्र की भेड़ एवं बकरियों में पाया जाता है परन्तु बच्चों में इसका प्रकोप अति तीव्र होता है। इस रोग से 50–70 प्रतिशत बकरियाँ एवं भेड़ें मर जाती हैं। यह रोग बहुत ही संक्रामक है तथा बहुत ही जल्द महामारी के रूप में फैल जाता है। इस बीमारी में पशुओं की साँस तेज चलती है व साँस लेने में परेशानी होती है। इस रोग के 2–4 दिनों बाद ग्रसित पशुओं में तीव्र दस्त शुरू हो जाता है जो कि एक धार की तरह होता है। इस अवस्था में पशु खाना–पीना छोड़ देता है। पशु का तापक्रम बहुत अधिक हो जाता है तथा मृत्यु भी हो जाती है। बचाव के लिए मानसून से पूर्व भेड़ एवं बकरियों को इस बीमारी का टीका अवश्य लगवाना चाहिए। पहला टीका 2 माह तथा दूसरा टीका 4 साल की उम्र में लगाते हैं।

टीकाकरण

इन्टेरोटॉक्सीमिया (ई.टी.) : यह बीमारी विशेष रूप से भेड़ एवं बकरियों में होती है। इस बीमारी का लक्षण है पतला दस्त, जिससे पशु की मृत्यु हो जाती है।

मात्र टीकाकरण के द्वारा ही इस बीमारी से बचाव किया जा सकता है। टीका वर्ष में एक बार मानसून से पूर्व लगाया जाता है। यह बीमारी एक बीमार पशु से स्वस्थ पशु में किसी भी माध्यम से फैलती हैं। अतः पशुपालक, संक्रमित पशुओं या बीमार पशुओं को अलग करके रखें तथा उचित उपचार कर समयानुसार टीका लगवायें एवं स्वस्थ पशुओं को भी टीका लगायें।

टीकाकरण

किसान भाईयों को प्रायः सभी संक्रामक बीमारियों का टीका अपने पशुओं को लगवाना चाहिए। अगर ऐसा नहीं कर सकते हैं तो कम से कम गला घोंटू, खुरपका–मुँहपका एवं लंगड़ी बुखार के लिये टीका अवश्य लगवायें। इन सभी बीमारियों का टीका अलग–अलग नाम से बाजार में उपलब्ध है। वैज्ञानिकों के प्रयास से आज इन तीनों बीमारियों का टीका एक ही टीके के अन्दर संयुक्त रुप से बाजार में उपलब्ध है अतः इन तीनों बीमारियों का टीका एक ही बार लगवाकर पशुपालक वर्ष भर के लिए इन बीमारियों से निजात पा सकते हैं। सभी बीमारियों का टीका बाजार में सस्ते दामों पर उपलब्ध है तथा जिले के पशु–चिकित्सालय पर भी सरकार के नियमानुसार मिलता है। पशुपालक, पशुओं को संक्रामक रोग का टीका वर्षा के पूर्व अर्थात जून तक अवश्य लगवा देना चाहिए। क्योंकि यह सभी बीमारियाँ वर्षा ऋतु में फैलती हैं। इसी तरह भेड़–बकरी पालकों को चाहिए कि वे अपने जानवरों को कम से कम इन्ट्रोटाक्सीमिया एवं प्लेग (पी.पी.आर.) का टीकाकरण अनिवार्य रुप से करें क्योंकि अगर यह बीमारी एक बार फैल गयी तो महामारी के रुप में पूरे गाँव के पशुओं की मृत्यु हो सकती है।

सावधानियाँ : सभी दुधारू पशुओं एवं बछियों (जो तीन माह से बड़ी हो) को टीका लगाया जा सकता है। अत्यधिक गर्मी के दिन में, 6 माह से अधिक गाभिन पशुओं को तथा तीन माह से कम आयु के बछियों को टीका न लगाये। संक्रमित पशुओं को टीका अलग से लगायें।

आधुनिक टीकों के नाम

- रक्षा ट्रायोवैक – 3 मि.ली. प्रति पशु (तीन बीमारीयों खुरपका–मुँहपका, गला घोंटू एवं लगड़ी के प्रति प्रतिरोधी)
- रक्षा वाइयोवैक – 3 मि.ली. प्रति पशु (खुरपका–मुँहपका एवं गला घोटू)
- रक्षा एफ.एम.डी. – 3 मि.ली. प्रति पशु (खुरपका–मुँहपका)
- रक्षा एच.एस. – 3 मि.ली. प्रति पशु (गला घोंटू)
- टीका का लागत मूल्य प्रति पशु 20/–रु0 मात्र

मवेशियों में टीकाकरण सारिणी

माह	बीमारी का नाम	टीका	प्रतिरक्षा अवधि
मई–जून	एन्थ्रैक्स (गिल्टी रोग)	स्पोर वैक्सीन	1 वर्ष
मई–जून	ब्लैक क्वार्टर (लंगड़ी)	मृत वैक्सीन	1 वर्ष
मई–जून	गला घोंटू	ऑयल एडजुवैंट वैक्सीन	1 वर्ष
6 माह के उम्र में किसी भी समय	ब्रुसेलोसिस	काटन सट्रेन–19	3–4 ब्यात तक
मई–जून दिसम्बर–जनवरी	खुरपका–मुँहपका रोग	पाली वैलेंट टिशु कल्चर वैक्सीन	6–9 माह वर्ष में दो बार

भेड़ एवं बकरियों में टीकाकरण सारिणी

माह	बीमारी के नाम	टीका	प्रतिरक्षा अवधि
जून	खुरपका–मुँहपका	एफ.एम.डी.	6 माह
जुलाई	गला घोंटू	एच.एस.	1 वर्ष
अगस्त	इन्ट्रोटाक्सीमिया	ई.टी.	1 वर्ष
दिसम्बर	इन्ट्रोटाक्सीमिया	ई.टी.	6 माह
किसी भी समय	बकरी प्लेग	पी.पी.आर.	जीवन पर्यन्त

परजीवी नियंत्रण

गाय एवं भैंस : पशुओं में अन्तः परजीवियों का संक्रमण एक गम्भीर समस्या है। यह पशु का खून चूसकर उन्हें कमजोर करते हैं साथ ही दूसरी बीमारियों को फैलाते है। इनसे बचाव के लिए 'ईवरमेक्टीन' नामक दवा का उपयोग सर्वोत्तम है। इस अकेली दवा से अधिकतर अन्तः तथा बाह्य परजीवी समाप्त हो जाते हैं। एक ही खुराक से परजीवियों का जीवन चक्र समाप्त हो जाता है। यह दवा नीओमेक, आइवोमेक आदि के नाम से बाजार में मिलती है। इसकी खुराक 1 मि.ली. प्रति 50 कि.ग्रा. शरीर भार की दर से खाल के नीचे चमड़ी में (सबकुटेनियस इन्जेक्सन) के रूप में लगाया जाता है। एक वयस्क पशु में एक इन्जेक्सन का खर्च मात्र रू0 50 आता हैं। गोल कृमि एवं फेफड़ों के कृमि नियत्रंण के लिए अन्य सस्ती दवायें जैसे पैनाक्योर, पायरेन्टल, फेनवेंडाजॉल, अलवेंडाजॉल, आक्सीक्लोजॉनाईड, लेवामिजॉल तथा लीवर कृमि के लिए जॉनिल, डिस्टोडिन, बैनमिन्थ आदि दवायें पशु–चिकित्सक के परामर्श से दे सकते हैं। पशुओं में कृमिनाशक के प्रयोग से दुग्ध उत्पादन में लगभग 5 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी पायी गयी है।

एस्कैरिस

भेंड़ एवं बकरी : प्रमुख अन्तःपरजीवियों में काक्सीडिया, हीमोंकोसिस, एस्कैरिस (गोलकृमि) एवं लिवरफ्लूक है। परन्तु इसकी पहचान आम भेड़–बकरी पालक के लिए आसान नहीं है अतः लक्षण के आधार पर उचित दवा एवं खुराक जानने के लिए पशु–चिकित्सक से सम्पर्क करें।

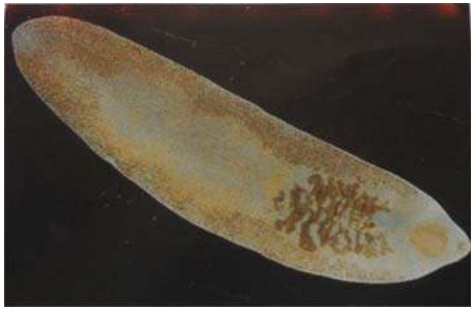

लिवर फ्लूक

काक्सीडियोसिस : एम्प्रोलीयम (5 मि.ग्रा./कि.ग्रा. शारीरिक वजन), मोनेन्सीन (20–25 मि.ग्रा./कि.ग्रा. आहार), नाइट्रोफ्यूराजोन (70 मि.ग्रा./कि.ग्रा. शारीरिक भार) अथवा सल्फोनामाइड्स (200–300 मि.ग्रा./कि.ग्रा. शारीरिक भार)।

हीमोंकोसिस : नीलवर्म (15 मि.ग्रा.), पैनाक्योर (5 मि.ली.) या बैनमिंथ (0.25 मि.ली.) प्रति कि.ग्रा. शारीरिक भार के अनुसार।

एस्कैरिस : फेनबेन्डाजोल, अलवेन्डाजोल अथवा लेवामीजोल

फ्लूक : जैनिल अथवा आक्सीक्लोजानाइड (10–15 मि.ली. एक खुराक)।

जानवरों में बाह्य परजीवी द्वारा होने वाले विभिन्न प्रकार की बीमारियों से जानवरों की मृत्यु हो जाती है तथा दूध और मांस का उत्पादन कम हो जाता है। जिससे किसानों को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है।

- सभी प्रकार की बाह्य परजीवी पशुओं के खून को चूसती हैं। एक बाह्य परजीवी प्रतिदिन कम से कम 1 से 2 मि.ली. रक्त पी जाती है, जिसके वजह से जानवरों में कमजोरी आती है।
- बाह्य परजीवी के काटने से जानवरों के शरीर पर घॉव हो जाते हैं जिसके कारण कीड़े पड़ सकते हैं तथा त्वचा रोग भी हो सकता है।
- बाह्य परजीवी के काटने से टिक्स पैरालिसीस बीमारी भी हो सकती है।
- बाह्य परजीवी से होने वाले रोग जैसे बॅबेसिओसीस, एनाप्लाजमोसिस, थैलेरिओसिस, अरलीकिओसीस और रिकेटिसीयल सबसे महत्वपूर्ण हैं। इन बीमारियों के कारक बाह्य परजीवी में उनके अनेक पीढ़ियों तक पाये जाते हैं।
- बाह्य परजीवी निरोगी पशुओं में जानलेवा बीमारियों का फैलाव करते हैं इसलिए इनसे सम्बधित बीमारियों के निर्मूलन के लिए बाह्य परजीवियों को खत्म करना अत्यन्त आवश्यक है।

डेल्टामेथ्रीन (ब्यूटाक्स– ट्रेड नाम) तथा अमिटराज (एक्टोडेक्स– ट्रेड नाम) प्रमुख बाह्य परजीवी नाशक दवायें हैं। नई दवाईयाँ जैसे बेटीकॉल, पोरआन आदि भी बाजार में विभिन्न नामों से उपलब्ध हैं। ये सभी दवायें विषैली होती है, इसलिए इनकी सही मात्रा पशु–चिकित्सक से सलाह–मशविरा के बाद ही देनी चाहिए

क्योंकि कम मात्रा से बाह्य परजीवी मरती नहीं हैं और अधिक मात्रा से जानवरों को नुकसान होता है। इसलिए सभी तरह की दवाईयाँ कम्पनी के निर्देशानुसार एंव पशु–चिकित्सक की सलाह से ही उपयोग करना चाहिए।

औषधि	औषधि का स्वरूप	मात्रा	उपयोग करने की विधि
साइपरमेथ्रीन	ई.सी.	1 मि.ली./लीटर पानी के साथ	छिड़काव
डेल्टामेथ्रीन	ई.सी.	1 या 2 मि.ली./लीटर पानी के साथ	छिड़काव
अमिटराज	ई.सी.	1 मि.ली./लीटर पानी के साथ	छिड़काव
असूँन्टाल	डब्लू.पी.	1:10 मात्रा	छिड़काव
पेस्टोबेन	लोशन	1:10 मात्रा	छिड़काव

उपरोक्त दी गई औषधियों में से कोई भी एक औषधि पशु–चिकित्सक के निर्देशानुसार बड़े एवं छोटे पशुओं के उपयोग में लायें।

थनैला रोग (मैस्टाइटिस) की रोकथाम

थनैला एक विश्वव्यापी बीमारी है जो दुग्ध उत्पादन को सबसे ज्यादा हानि पहुँचाती है। इस बीमारी में संक्रमण थन में होता है जिसकी जानकारी, दूध के भौतिक तथा रासायनिक परिवर्तन द्वारा होती है जैसे दूध का रंग बदलना, छेछड़े आना, खून आना तथा थनों में सूजन आदि का होना। प्रभावित पशु का दूध पीने से मनुष्यों को भी कई प्रकार की बीमारियाँ हो सकती है।

कारण

यह बीमारी बैक्टीरिया (जीवाणु) द्वारा होती है जो थनों के रास्ते से प्रवेश करते हैं तथा वहाँ पर इनकी संख्या धीरे–धीरे बढ़ती जाती है। बैक्टीरिया गंदे वातावरण, पशु के थन व अयन की त्वचा पर मौजूद रहते हैं। कभी–कभी यह रोग, दूध निकालने वाले के हाथों में जीवाणु की उपस्थिति द्वारा भी फैलता है। प्रायः दूध में तथा थनों के अन्दर कोई जीवाणु नहीं पाया जाता है। लेकिन कुछ कारणों से बैक्टीरिया थन में प्रवेश करते है और यह रोग उत्पन्न करते हैं। कुछ प्रमुख कारण निम्नलिखित हो सकते हैं।

- थन या नाक में चोट लगने, कटने या फटने पर इस बैक्टीरिया के प्रवेश में सुविधा होती है और रोग तेजी से फैलता है।
- अधिक दूध देने वाले तथा क्रास ब्रेड (जर्सी, फ्रीजीयन) पशुओं को यह बीमारी अधिक होती है।
- अधिक उम्र वाले पशु को इस बीमारी की सम्भावना अधिक होती है।
- बीमारी का प्रकोप ब्यात के शुरू में अथवा अंत में अधिक पायी जाती है।
- पशु तथा इसके आवास में सफाई की कमी से भी यह रोग फैलता हैं।

लक्षण

- पशु को तेज बुखार हो जाता है और जुगाली करना बंद कर देता है। थन व अयन के एक या अधिक भागों में सूजन आ जाती है तथा वह छूने पर गर्म, लाल व सख्त पाया जाता है।
- थनों से गाढ़ा, हल्का पीला, खून मिला हुआ द्रव निकलता है जो थन से खींचने पर कठिनाई से बाहर निकलता है। कभी–कभी यह फोड़े का रूप भी ले लेता है जो बाहर की तरफ फूटता है।
- दूध में छोटे–छोटे थक्के आने लगते हैं। बाद में दूध पतला पड़ जाता है और थक्के भी ज्यादा आने लगते हैं।
- दूध का रंग पीला तथा कभी–कभी खून मिला होता है। दूध की मात्रा घट जाती है तथा कभी–कभी दूध निकलना बिल्कुल बन्द हो जाता है।

रोग से बचाव

- दूध निकालने वाले व्यक्ति का हाथ अच्छी प्रकार साफ होना चाहिए। दूध पूरे हाथ से तथा पूर्ण मात्रा में निकालना चाहिए।
- दूध निकालते समय थनों को झाग तथा हाथ को तेल इत्यादि से चिकनाई नहीं करना चाहिए।
- रोगी पशु का दूध अंत में निकालें तथा सफाई पर पूर्ण ध्यान दें।
- दूध निकालने के पश्चात दुग्ध नलिकाओं को बंद होने में लगभग 15 मिनट का समय लगता है। इस बीच पशु प्रायः थक जाते हैं। और तुरन्त बैठ जाते हैं। अतः किसान भाई ध्यान रखें और पशु को दुहने के पश्चात 15 मिनट तक जमीन पर बैठने न दें तो संक्रमण की सम्भावना कम हो जाती है।
- आहार के साथ विटामिन 'ई' दिये जाने से थनैला रोग पर नियंत्रण किया जा सकता है। इस उद्देश्य के लिए गर्भावस्था के अंतिम 60 दिन तथा ब्याने के 30 दिन पश्चात् विटामिन 'ई' 1000 आई.यू. एवं सेलेनियम युक्त खनिज मिश्रण 50 ग्रा. प्रति पशु प्रतिदिन दिये जाने का सुझाव है।

उपचार

पशु–चिकित्सक से संपर्क करें एवं एंटीबॉयोटिक जो थन में दी जा सकती है, जैसे – एमोक्सिसीलीन, क्लोक्सासीलीन, स्ट्रेप्टोमाइसीन, पैनिसिलिन एवं सेफ्ट्राईक्जोन समूह की दवा 4–5 दिन चढ़ाना चाहिए।

अम्बर या बेली की रोकथाम

इस बीमारी को स्थान विशेष के अनुसार अलग–अलग नामों जैसे बेली बनना, पूरईन, अम्बर अथवा फूल निकलना (प्रोलेप्स यूटरस) आदि नामों से जानते है। इसमें गर्भाशय अथवा गर्भाशय का कुछ भाग बाहर निकल आता है। भैंसों की अपेक्षा गायों में यह रोग अधिक होता है। यह समस्या प्रसव के बाद की अपेक्षा पूर्व में अधिक पायी जाती है। यदि समय पर इसका उपचार न किया गया तो यह समस्या गम्भीर रूप ले सकती है।

कारण

- मादा का ढ़लान वाले स्थान पर लम्बे समय तक बंधे रहना।
- उदर का अधिक भरा होने पर गर्भाशय पर दबाव पड़ना।
- आहार में कैल्सियम की मात्रा कम होना।
- गर्भकाल के अंतिम माह में ईस्ट्रोजेनयुक्त चारा खिलाना।
- प्रसव के दौरान बच्चे को बलपूर्वक खींचना।
- रक्त में कैल्सियम एवं फास्फोरस की कमी होना।
- कुपोषण अथवा लगातार असंतुलित आहार देना।
- बच्चेदानी में जलन या संक्रमण होना।
- गर्भकाल के समय प्रोजेस्ट्रान हार्मोन की कमी होना।

उपचार

1. संतुलित आहार दें।
2. आहार में हरे चारे को वरीयता दें।
3. आहार के साथ खड़िया, नमक एवं 40–50 ग्राम खनिज लवण प्रतिदिन दें।
4. पशु–चिकित्सक से मिलकर कैल्सियम का इंजेक्शन लगवायें एवं सलाह लें।

विषाक्तता : लक्षण एवं उपचार

विष एक ऐसा पदार्थ है जिसके खाने, पीने अथवा अधिक मात्रा में प्रयोग से प्रायः पशुओं की मृत्यु हो जाती हैं। बहुत से विषाक्त तत्व हरे चारों अथवा बाह्य माध्यम से पशुओं को हानि पहुँचाते है। इसलिए पशुपालकों को इन विषाक्त तत्वों के बारे में जानकारी होनी चाहिए ताकि ऐसी कोई दुर्धटना होने पर वे अपने पशुओं के जीवन की रक्षा कर सके।

1. यूरिया विषाक्तता

पशु खुला रखने पर कभी कभार यूरिया स्वतः खा लेता है अथवा यूरिया खाद को पशु आहार के साथ रखने पर यूरिया रिसाव द्वारा आहार में मिल जाता है या जब कभी हम चारे को यूरिया से उपचारित करते हैं तो यूरिया घोल चारे में एक जैसा ठीक से नहीं मिल पाता है और जब पशु ऐसा चारा खाता है तो यूरिया विषाक्तता हो सकती है।

लक्षण : पशु बेचैन, सुस्त, मांसपेशियों मे ऐंठन, मुँह से अधिक मात्रा में लार आना, बार–बार पेशाब एवं गोबर करना, अफरा होना तथा साँस लेने में कठिनाई जैसे लक्षण दिखाई देते है। अधिक मात्रा में यूरिया खाने से पशु की मृत्यू हो जाती है।

बचावः यूरिया तथा यूरिया घोल को पशु से दूर रखना चाहिए तथा चारा उपचारित करते समय यूरिया का घोल उचित अनुपात में ठीक तरह चारे में मिलाना चाहिए।

उपचार

- विषाक्तता का लक्षण दिखाई देने पर पशु को गुड़ या शीरा का शरवत बनाकर ज्यादा से ज्यादा जितना पी सकता हो पिलाना चाहिए।
- लगभग 2–5 लीटर पानी में 100–200 मि.ली. सिरका घोल कर पिलाना चाहिए। सिरका न मिलने पर 5 प्रतिशत एसिटिक एसिड का घोल बनाकर पिलाएं।
- कैल्बोराल या माइफेक्स अथवा कैल्सियम ग्लूकोनेट इन्जेक्शन का 500 मि.ली. या पशु के भार के अनुसार नस में देना चाहिए।

2. सायनाइड विषाक्तता

यह एक शक्तिशाली विष है जो कई प्रकार के चारों जैसे ज्वार, बाजरा, चरी, पेड़ी आदि में पाया जाता है। गर्मी के मौसम तथा पानी के अभाव में या सूखा पड़ने पर अपूर्ण विकसित मुरझाते या सूखते चारे में सायइनाइड की मात्रा अधिक होती है। जानकारी के आभाव में पशुपालक जब ऐसा चारा पशु को खिला देते है तो पशु इस विषाक्तता का शिकार हो जाता है।

लक्षणः प्रभावित चारा खाने के 10–15 मिनट बाद ही पशु में बेचैनी, मुँह खोल कर श्वास लेना, मुँह पर फेन आना, अफरा होना, पशु का गिर जाना एवं उठने में असमर्थ रहना जैसे लक्षण दिखाई देने लगते है। मांस–पेशियों में तीव्र ऐंठन के साथ दुग्ध ज्वर की तरह सिर को बगल की तरफ घुमा कर रखना एवं आँखें बन्द करना तथा मुँह से कड़वे बादाम जैसी गंध आना, दांतो का किटकिटाना एवं दम घुटने जैसी कराह व पीड़ा के साथ 1–2 घंटे में पशु की मृत्यु हो जाती है।

बचाव

- पशुओं को सूखे से प्रभावित मुरझाये या सूखते हुये, कम बढ़ी हुई ज्वार, बाजरा, चरी आदि नहीं खाने देना चाहिए।
- सूखा पड़ने पर या पानी के कमी के कारण बौने, सूखकर टेढ़े पीले मुरझाते या असमान्य पौधों को भी चारे के रूप में उपयोग में नहीं लाना चाहिए।
- 30 दिन के उम्र वाले पौधों तथा जमीन की सतह के पास नई शाखाओं में यह विष अधिक मात्रा में होता है अतः बुआई के पश्चात 50 दिन बाद या फूल आने पर फसल की कटाई करें तथा सुखे चारों में मिलाकर खिलायें।
- फसल को फूल लगने के समय 'हे' या साइलेज के रूप में संरक्षित कर लें क्योंकि पकने के दौरान यह विष समाप्त हो जाता है।
- हरे चारे को पशु को खिलाने के पूर्व उसे धूप में 1–2 घण्टे फैलाने से चारे के अन्दर उपस्थित विष की मात्रा में काफी कमी हो जाती है।

उपचार

- सायनाइड विषाक्तता के लक्षण प्रकट होने पर पशु को 8 ग्राम सोडियम नाइट्राइट 120 मि.ली. आसुत जल एवं 200 ग्राम सोडियम थायोसल्फेट को एक लीटर आसुत जल में घोलकर नस के माध्यम से देना चाहिए।

- 30–50 ग्राम सोडियम थायोसल्फेट हर घण्टे मुँह से देना चाहिए।
- डेक्स्ट्रोज या कैल्बोराल एवं एन्टीहिस्टामिनिक का इन्जेक्शन देना चाहिए।

3. नाइट्रेट या नाइट्राइट विषाक्तता

ज्वार, बाजरा, चरी, जई, मक्का आदि फसलों में अधिक मात्रा में नाइट्रेट युक्त उर्वरक दी गई हो या सीवर जल से सिंचाई की गई हो तो कम उम्र वाले पौधों में अधिक मात्रा में नाइट्रेट जमा हो जाता है और उसके खाने से विषाक्तता उत्पन्न हो जाती है। नाइट्रेट विषाक्तता मुख्यतः ऐसे चारों से होती है जिसकी वृद्धि रूक गयी हो एवं जो सूखे से ग्रस्त हो। उच्च नाइट्रेट युक्त चारों का अधिक मात्रा में शरीर में पहुँचने पर नाइट्रेट का नाइट्राइट में परिवर्तन हो जाता है। यह रक्त में पहुँचकर हीमोग्लोबिन को मेटहीमोग्लोबिन में बदल देता है जिससे शरीर के विभिन्न ऊतकों में आक्सीजन नहीं पहुँच पाती है और नाइट्रेट या नाइट्राइट विषाक्तता हो जाती है।

लक्षणः पशु का श्वसन एवं नाड़ी दर का बढ़ जाना, साँस लेने में कठिनाई, लार का गिरना, उदर पीड़ा (पशु का पेट की तरफ मुँह घुमा कर बैठ जाना), मांस पेशियों में कँपकपी, आक्सीजन की कमी से श्लेष्मा का गहरे रंग का होना तथा रक्त चाकलेटी भूरा होना प्रमुख लक्षण है। नाइट्रेट या नाइट्राइट विषाक्तता से गर्भ धारण किए पशुओं का कुछ दिन पश्चात गर्भ गिर सकता है।

बचाव

- गर्मी के दिनों में पौधे में फूल बनते समय अथवा बोने के 50 दिन पश्चात ही पशु को खिलायें।
- कमजोर पशुओं को नाइट्रेट युक्त चारे के सेवन से बचायें।
- सूखा ग्रस्त बौने/सूखे ऐठे, मुरझाये हुए पौधों को चारे के रूप मे उपयोग में न लायें।

उपचार

- मेथिलीन ब्लू 4–22 मि.ग्रा. प्रति कि.ग्रा. शरीर भार पर 1 प्रतिशत घोल सीधे नस में देना चाहिए। इसके पश्चात अगर विष का लक्षण मौजूद रहता है तो इसे दुबारा दे सकते हैं।
- सहायक के रूप में एक लीटर खनिज तेल अथवा 500 ग्राम सोडियम सल्फेट मुख द्वारा प्रति वयस्क पशु को दिया जा सकता है।

- 5–20 मि.ग्रा. प्रति कि.ग्रा. के हिसाब से एस्कार्बिक ऐसिड (विटामिन 'सी') सीधे नस में देना चाहिए।

4. कीटनाशक औषधि विषाक्तता

कीटनाशक दवाईयाँ जो पौधों पर छिड़की जाती है, इनके सीधे सम्पर्क में आने या इनके छिड़के हुए चारे या घास को खाने से यह विषाक्तता होती हैं।

लक्षण : इस विषाक्तता में पशु में उत्तेजना, मांसपेशियों में कँपकपी एवं थरथराहट, दुर्बलता, पक्षाघात, मुँह से लार बहना एवं दांतो का किटकिटाना, श्वास कष्ट, लड़खड़ाना, बार–बार मूत्र का त्यागना इत्यादि लक्षण दिखाई देते हैं।

उपचार

- सेलाइन परगेटिव (मैगसल्फ) या सक्रिय चारकोल देना चाहिए। ऑयली परगेटिव नहीं देना चाहिए।
- एट्रोपीन सल्फेट 0.2–0.5 मि.ग्रा. प्रति कि.ग्रा. शरीर भार के अनुसार मांस में देना चाहिए।
- सोडियम फीनोबार्बीटाल 5 ग्राम नस में देना चाहिए।
- पशुओं के बाहरी शरीर पर विष लगा हो तो इसको साबुन से धो देना चाहिए।

5. मैलाथियान एवं पैराथियान विषाक्तता

कृषि रसायनों से मिला अनाज एवं शाक–सब्जी अथवा ऐसे फसल जिस पर कीटनाशक का छिड़काव तुरंत किया गया हो को खाने से यह विषाक्तता होती है।

लक्षण : वमन की इच्छा अथवा वमन, उदर शूल, अतिसार, मांसपेशियों में ऐंठन, अत्यधिक अश्रु स्राव तथा पसीना बहना, श्वास कष्ट, मांसपेशियों में ऐंठन एवं फड़कन, बेहोश हो जाना तथा श्वास क्रिया बन्द हो जाने से पशुओं की मृत्यु हो जाती है।

उपचार

- एट्रोपीन सल्फेट इन्जेक्शन गाय या भैंस में 0.25 मि.ग्रा. प्रति कि.ग्रा. भार पर एक तिहाई नस में तथा दो तिहाई मांस में देना चाहिए।
- पाइरीडीन–2–अल्डोक्साईम (2–पाम) को 20–50 मि.ग्रा. प्रति कि.ग्रा. शरीर भार पर नस में देना चाहिए इस दवा का असर, लक्षण प्रकट होने के तुरंत बाद देना चाहिए अन्यथा दवा प्रभावशाली नहीं रह पाता है।

पशु स्वास्थ्य हेतु पारम्परिक तकनीकियाँ

प्राचीन काल से मनुष्य अपने भोजन, स्वास्थ्य एवं सुरक्षा की जानकारी प्रकृति से प्राप्त करते आये हैं और यह ज्ञान पीढ़ी दर पीढ़ी स्वतः हस्तांतरित होती रहती है। पशुपालन के क्षेत्र में ये ग्रामीण तकनीकियाँ सस्ती, आसानी से उपलब्ध एवं लाभकारी होने के कारण आज भी प्रचलित एवं टिकाऊ है।

पारम्परिक तकनीकियों के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

- **पशुओं का मद (गर्मी) में न आना** : ग्रामीण अंचलो में ब्यात से पूर्व एवं पश्चात् अधिकांश पशु सही समय पर मद में नहीं आते हैं जो कि पशुपालन व्यवसाय की एक गम्भीर समस्या है। मद को नियंत्रित करने के लिए किसान भाई ग्रामीण तकनीकियाँ जैसे 250 ग्रा. सेमल की जड़ या 250 ग्रा. साँवा या कोदो का आटा (छिलका सहित) या 25 ग्रा. कबूतर का बिट या 500 ग्रा. बाँस की जड़ अथवा 7–10 हल्दी का फूल प्रतिदिन लगभग एक सप्ताह तक खिलाते हैं। जिससे पशु नियमित मद (गर्मी) में आ जाते हैं।

- **जेर रूकना/खेड़ी का नहीं गिरना** : जेर रूकना एक गम्भीर समस्या है इसके लिए किसान भाई 2 कि.ग्रा. बाँस की पत्ती अथवा 20 ग्रा. हल्दी, 20 ग्रा. अजवाईन पाउडर को 250 ग्रा. गुड़ में मिलाकर ब्यात के पश्चात् पशु को खिलाते हैं, जिससे जेर जल्दी गिर जाती है। कभी–कभी किसान लटके हुये जेर में 1–1.5 कि.ग्रा. वजन बाँधकर पशु को कुछ देर टहलाते हैं जिससे जेर निकल जाती है।

- **खुरपका–मुँहपका** : खुरपका–मुँहपका एक विषाणु जणित रोग है जिसमें पशुओं के मुँह, थन एवं खुर पर छोटे–छोटे फफोले हो जाते हैं जिससे पशु खाने एवं चलने में असमर्थ हो जाते हैं। इस परिस्थिति में किसान भाई पलास की छाल (एक भाग) एवं नीम की पत्ती (दो भाग) लेकर एक साथ पानी में उबालकर घाव को धोने एवं लेप लगाने से इस समस्या से निजात पाते हैं।

- **अपच की समस्या** : अपच की समस्या के कई कारण हैं, जैसे खान–पान में अचानक परिवर्तन, सड़े–गले आहार, गंदा पानी तथा अकस्मात वातावरण में परिवर्तन। परन्तु पारम्परिक ग्रामीण विधि से इसका उपचार सम्भव है–
  - अपच/पेट में गैस बनना/पेट फूलना : इसके लिए 20 ग्रा. खाने वाला सोडा (सोडियम बाईकार्बोनेट), 30 ग्रा. पीसा अजवाईन, 2 ग्रा. हींग तथा 30 ग्रा. काला नमक को गुड़ में मिलाकर खिलाने से अपच से छुटकारा मिल जाता है।
  - 100 ग्रा. काला नमक, 30 ग्रा. हींग, 100 मि.ली. तारपीन का तेल एवं 250 मि.ली. तीसी का तेल एक साथ मिलाकर दिन में एक बार देने से अपच से निजात मिल जाता है।
  - रेड़ी (अरंडी) अथवा तीसी का तेल 100 मि.ली. छोटे जानवर के लिए तथा 200 मि.ली. बड़े जानवर को देने से लाभ होता है।
- **दस्त** : किसान भाई पशुओं में दस्त को रोकने हेतु विभिन्न प्रकार के मिश्रण का उपयोग करते हैं, जैसे –
  - 250 ग्रा. बीज रहित भुना बेल का गूदा, 250 ग्रा. गुड़, 250 ग्रा. जौ का भुना आटा तथा 50 ग्रा. साधारण नमक को 4–5 ली. पानी में घोलकर पिलाने से दस्त में आराम हो जाता है।
  - 500 ग्रा. चावल को 4–5 ली. पानी में पका कर माड़ सहित 50 ग्रा. खड़िया पाउडर, 20 ग्रा. कत्था मिलाकर एक या दो बार देने से बीमारी ठीक हो जाती है।
  - 50–100 ग्रा. तिल के पत्ते को अच्छी तरह से पीस कर 250–500 मि.ली. पानी में मिलाकर पिलाने से समस्या का समाधान हो जाता है।
- **कब्ज** : 20 ग्रा. काला नमक, 20 ग्रा. साधारण नमक तथा 10 ग्रा. हींग को 250–500 मि.ली. पानी में मिलाकर एक या दो बार पशुओं को देते है अथवा 100 मि.ली. तीसी का तेल छोटे पशु को एवं 200 मि.ली. बड़े पशुओं को देते हैं।
- **ठंड लगना** : इससे बचाव एवं उपचार हेतु घरेलू औषधि उपयोग में लाया जाता है, जैसे– अजवाईन, सोंठ, मुलेठी, सेंधा नमक तथा अदरक प्रत्येक 10–20 ग्रा. मिलाकर अच्छी तरह से पिस कर 4–5 ली. पानी में घोलकर प्रभावित पशुओं को प्रतिदिन देते हैं।

- **लू लगना** : 50 ग्रा. साधारण नमक, 500 ग्रा. गुड़, 250 ग्रा. भुना जौ का आटा को 4–5 ली. पानी में घोलकर दिन में दो बार देते हैं अथवा 200 ग्रा. पुदीना तथा 500 ग्रा. प्याज पीसकर 1 ली. पानी में दो बार दिन में पिलाते हैं।

- **अंतः परजीवी नियंत्रण** : किसानों द्वारा निम्नलिखित चीजें पिलाने से काफी हद तक अंतः परजीवी का नियंत्रण हो जाता है।

  - 250 ग्रा. मट्ठा, 20 ग्रा. साधारण नमक तथा 20 ग्रा. पिसा हुआ राई का बीज।
  - 250 ग्रा. मूली की पत्ती अथवा पिसा हुआ प्याज एक लीटर पानी में।
  - 20–25 ग्रा. पिसी सुपाड़ी या पलास का बीज 250 मि.ली. पानी में।
  - 100 मि.ली. नीम या सरसों का तेल।

- **मुर्गियों में स्वास्थ्य प्रबंधन** : किसान भाई मुर्गी प्रबंधन हेतु विभिन्न प्रकार के औषधि का प्रयोग स्वतः करते हैं, जैसे– अधिक ठंड एवं बरसात में सोंठ का पाउडर मुर्गी आहार में मिलाकर देने से दस्त एवं पेचिस पर नियंत्रण, करैला का अर्क पीने के पानी के साथ देने से पेचिस एवं पेट की समस्या का समाधान एवं लहसुन या प्याज अथवा इसकी पत्तियाँ खीलाने से जीवाणु जनित रोगों की रोकथाम आदि।

पशुपालन जन्य प्रश्न एवं उत्तर

प्र0– दुधारू पशुओं में एकाएक दुग्ध उत्पादन क्यों गिर जाता है इससे बचाव के क्या उपाय हैं ?

उ0– इस बीमारी को एग्लैक्टिया कहते हैं। इसमें पशु के शरीर में कैल्सियम की कमी हो जाती है, अतः दुधारू पशु को 40–50 ग्राम खनिज मिश्रण प्रतिदिन खिलाना चाहिए।

प्र0– कुछ गाय व भैंस मिट्टी खाती हैं, इसका क्या उपचार है ?

उ0– इस बीमारी को पाईका कहते है जो फास्फोरस की कमी से होता है। ऐसे पशु कागज, प्लास्टिक, मिट्टी सब कुछ खा लेते हैं। इसके उपचार हेतु पशु को प्रतिदिन खनिज मिश्रण जैसे एग्रीमीन, कैल्डीमीन, मिल्कमिन, मिनरलफोर्ट, मीनीमिक्स 40–50 ग्राम तथा कृमिनाशक दवा देना चाहिए।

प्र0– पशुओं में सर्रा बीमारी के कारण एवं उपचार बतायें ?

उ0– पशुओं में सर्रा का कारण खून में पाये जाने वाले ट्रिपेनोसोमा नामक प्रोटोजोआ है। यह प्रोटोजोआ खून चूसने वाली मक्खी द्वारा बीमार पशुओं से स्वस्थ्य पशुओं में फैल जाती है। बीमार पशु बार–बार पेशाब करते हैं। आँखें लाल हो जाती हैं। शरीर का तापक्रम 106^0–108^0 फा. हो जाता है। आँखें बहने लगती हैं तथा कभी–कभी आँखों की काली पुतली पर सफेद झिल्ली आ जाती है पशु खाना कम कर देता है। शरीर में थकावट आ जाती है, दूध सूख जाता है तथा ग्याभिन पशु का बच्चा गिर जाता है। कभी–कभी पशु चक्कर मारते हुए नजर आता है। इसकी मुख्य दवायें जैसे वैरेनिल, ट्राईक्वीन, एन्ट्रीसाइड– प्रोसाल्ट अथवा आधुनिक नई दवायें निकटतम पशु–चिकित्सक की परामर्श से प्रयोग करना चाहिए।

प्र0– लगभग एक महीने के पड़वा/पड़िया बुखार, अफरा अथवा दस्त होने से बच नहीं पाते हैं क्यों ?

उ0– इन बच्चों में एस्केरिस (पटेरे) का प्रकोप होता है। इससे बच्चों में बदबूदार दस्त, दांत का किटकिटाना, पेट का फूल जाना, पैर जकड़ जाना आदि मुख्य लक्षण होते है। इस बीमारी के उपचार के लिए कृमिनाशक दवा जैसे– एल्वोमार, बेनमिंथ देना चाहिए।

प्र0– गाय के ब्याने के बाद उसके चारो थनों से खून क्यों आ जाता है तथा इसका क्या उपचार है ?

उ0– चारों थनों से खून आने के कई कारण हो सकते हैं परन्तु मुख्य रूप से कैल्सियम की कमी से थनों से खून आ जाते हैं। खून अलग से दिखाई नहीं देता परन्तु चारों थनों का खून हल्का गुलाबी या लाल नजर आता है। ऐसी स्थिति में कैल्सियम इंजेक्शन जैसे माईफेक्स, थाईकाल, कैल्सियम–बोरोग्लूकोनेट नस में लगाते हैं या कैलडी–12, कैल्सियम सैन्डोज–10 मि.ली. या कैल्सिटॉक्स–30 मि.ली. मांस में लगाने से लाभ हो जाता है।

प्र0– क्या दुधारू पशुओं को सम्पूर्ण मात्रा में केवल हरा चारा जैसे बरसीम–जई आदि खिला सकते हैं ?

उ0– दुधारू ही नहीं, किसी भी तरह के पशु को पूर्ण मात्रा अर्थात भर पेट केवल हरा चारा नहीं खिलाना चाहिए। हरे चारे में नमी (पानी) की मात्रा अधिक होती है इससे आपके पशु को अफरा (गैस की समस्या) हो सकता है। भरपेट हरे चारे के साथ 2–4 कि.ग्रा. सूखा चारा (भूसा, कर्वी इत्यादि) शरीर भार के अनुसार अवश्य देना चाहिए।

प्र0– यूरिया उपचारित भूसा खिलाने का सुझाव दिया जाता है। क्या इससे पशु मरेगा नहीं ?

उ0– यूरिया उपचारित भूसा खिलाने से आपका पशु बिलकुल नहीं मरेगा बल्कि इससे उसका उत्पादन एवं स्वास्थ्य अच्छा होगा। यूरिया की मात्रा 4 कि.ग्रा./100 कि.ग्रा. भूसा से अधिक नहीं होनी चाहिए। पशु के पेट में सूक्ष्म जीव पाये जाते हैं जो यूरिया को उच्च किस्म के प्रोटीन में परिवर्तित कर देते हैं जो अन्ततः आपके पशु को मिल जाता है।

प्र0– अच्छे परिणाम के लिए मद के दौरान पशु को कब गर्भित करना चाहिए ?

उ0– अधिकतर गायें सुबह 4 बजे से दोपहर 12 बजे तक तथा भैंस शाम 6 बजे से सुबह 6 बजे तक गर्मी में आती हैं। भैंस सर्दी में अधिक प्रजनन करती है। अतः मद के लक्षण पहचान कर पशुओं को मद में आने के 10–12 घण्टे पश्चात् गर्भित करायें। अगर किसी कारणवश मदकाल निकल जाता है तो 21वें दिन विशेष नजर रखें और सही समय पर गर्भित करायें।

प्र0– बछिया को गले के नीचे फूल गया है और चारा कम खा रही है, क्या करें ?

उ0– इस बीमारी को वॉटल जॉ कहते हैं जो प्रायः वर्षा ऋतु में होता है। यह बीमारी लीवर फ्लूक की वजह से होता हैं। इससे बचाव के लिए पशुपालक अपने पशु को अंतः कृमिनाशी दवा जरूर दें विशेषतया, ऑक्सीक्लोजानाईड समूह की। आवश्यकता पड़ने पर पशु–चिकित्सक से सलाह लें।

प्र0– गाय एवं भैंस बच्चा देने के 24 घंटा बाद खीस निकालने के पश्चात् काँपनें लगी एवं बैठ गयी है क्या करें ?

उ0– आपके पशु को दुग्ध ज्वर का लक्षण है। दुग्ध ज्वर प्रायः अधिक दूध देने वाले जानवरों को कैल्सियम एवं फास्फोरस की कमी से होता है तथा पशु के खून में इनकी कमी तुरन्त परिलक्षित होने लगती है। यदि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो तो तुरन्त कैल्सियम एवं फास्फोरस का इंजेक्शन लगाना चाहिए तथा कैल्सियम पिलाया जाना चाहिए।

प्र0– खुरपका–मुँहपका रोग होने का कारण तथा उपचार क्या है ?

उ0– इस रोग का कारण एक प्रकार का विषाणु (वायरस) है। इसमें मुँह तथा खुर के बीच में घाव बन जाते हैं। घावों को फिटकरी या नीला थोथा के घोल से धोना चाहिए। मुँह के घाव पर बोरो–ग्लिसरीन तथा खुर के घाव पर हाईमैक्स या लोरेक्शन क्रीम लगाना चाहिए। पशुओं को इससे बचाव हेतु जून माह में टीका अवश्य लगवाना चाहिए।

प्र0– स्वस्थ पशुओं को खुरपका–मुँहपका से बचाव के क्या उपाय हैं ?

उ0– स्वस्थ पशुओं को बीमार पशुओं से अलग रखना चाहिए तथा बचाव हेतु टीकाकरण वर्षा ऋतु शुरू होने से पूर्व करा लेना चाहिए।

प्र0– गलाघोंटू (घुर्रका) होने का कारण तथा उपचार क्या है। स्वस्थ पशुओं को हम किस प्रकार बचायेगें ?

उ0– इस बीमारी को हेमोरेजिक सेप्टीसीमिया (एच.एस.) भी कहते हैं। जिसका कारण एक बैक्टीरिया (जीवाणु) है। इसमें पशुओं के गले में दर्द एवं सूजन होती है। साँस लेने में परेशानी होती है तथा पशु मुँह खोलकर साँस लेता है। लार गिरता है, घर्र घर्र की आवाज करता है, तेज बुखार हो जाता है। एक से तीन दिन में पशु मर जाता है। उपचार के लिए हाई डोजेज आफ टैरामाइसिन या सल्फा ड्रग नस में 3–5 दिन देना चाहिए तथा सूजन कम करने के लिए वैटालाग या प्रेडनीसोलोन का इन्जेक्शन भी लगाना चाहिए। स्वस्थ पशुओं को अलग रखना चाहिए। समय से टीकाकरण सबसे सस्ता एवं कारगर उपाय है।

प्र0– पशुओं में बाँझपन की समस्या बढ़ती जा रही है इसका कारण व बचाव क्या हैं ?

उ0– पशुओं में बाँझपन के कई कारण हो सकते है जैसे संतुलित आहार की कमी, खनिज तत्वों की कमी, गर्मी के लक्षण न पहचानना, समय से गर्भित न कराना, बच्चेदानी में संक्रमण, बच्चेदानी छोटा या टेढ़ा होना, वीर्य में खराबी आदि। उपचार हेतु पशु को किसी कुशल पशु–चिकित्सक को दिखायें।

प्र0– गाय–भैंस को बुखार व पेट दर्द से सुरक्षित रखने के क्या उपाय हैं ?

उ0– पशुओं को बुखार होने के कई कारण हो सकते है जैसे निमोनिया, लू लगना, अपच आदि। इसका उपचार वास्तविक कारण जानने पर ही बताया जा सकता है। प्राथमिक चिकित्सा में नोवालजीन, डिक्लोफेनेक या पैरासीटामॉल का इन्जेक्शन देकर बुखार उतार देना चाहिए। तत्पश्चात पशु–चिकित्सक की सलाह लें।

प्र0– दुधारू पशुओं के छोटे बच्चे के आँख से आँसू व कीचड़ आता है, कृपया उपचार बतायें ?

उ0– लक्षणों से प्रतीत होता है कि बच्चे के पेट में कीड़े हैं। इससे निजात पाने के लिए कीड़े मारने वाली दवा जैसे पीपराजीन, एलवेन्डाजॉल, फेनवेन्डाजॉल, क्लोसेन्टल, कुरसेलॉन नामक दवा पशु–चिकित्सक के निर्देशानुसार दें।

प्र0– गाय या भैंस पतला गोबर करती है और इस कारण दुबली पतली हो जाती है। बचाव के क्या उपाय हैं ?

उ0– पतला गोबर पशुओं में प्रायः केंचुऑ के प्रकोप के कारण होता है अगर ऐसी परिस्थिति उत्पन्न होती है तो केंचुआनाशी दवा देनी चाहिए। परन्तु कभी–कभी पतले गोबर को रोकने के लिए सेन्टोजिल वोलस एक–एक (सुबह–शाम) तीन दिन या सल्फामीडीन वोलस 2–2 सुबह–शाम चावल के माड़ में देना चाहिए। संभव हो तो 100 मि.ली. सल्फाडाईमिडीन नस में देना चाहिए।

प्र0– कभी–कभी भैंस के थन की फली (थन का अग्र भाग) जड़ से कट जाते है। इसका क्या उपचार हैं ?

उ0– भैंस के थन पर पहले एक दाना बनता है फिर फली के जड़ पर घाव (निक्रोसिस) हो जाता है। इस बीमारी को वायरस जनित मैमिलाइटिस कहते हैं। उपचार के लिए पहले लाल दवा के पानी से थन को धोना चाहिए फिर घाव पर पोवीडीन आयोडीन या जिंक आक्साइड मलहम सुबह–शाम लगाना चाहिए। पशु–चिकित्सक की सलाह ले सकते हैं।

प्र0– भैंस में बार–बार अफरा होने पर क्या करना चाहिए ?

उ0– भैंसों में अफरा बनने के कई कारण हो सकते हैं, जिसमें मुख्य रूप से गैस बनाने वाले चारों का अधिक मात्रा में खाना, आंतो में किसी प्रकार की रूकावट, अवांछनीय तत्व जैसे प्लास्टिक आदि खा लेना है। उपचार के लिए जानवर के मुँह में नीम की टहनी बाँध दें जिससे पेट की गैस निकल जाये। अगर गैस ज्यादा बन गई है तो बायें कोख से सुई द्वारा गैस निकाला जा सकता है। तुरन्त ही गैस निरोधक दवा जैसे ब्लोटोसिल 100 मि.ली., ब्लोटीनोक्स 100 मि.ली. या टिम्पोल 50 ग्राम घोल के रूप में पिलाना चाहिए।

प्र0– पशुओं को पागल कुत्ता काटने की अवस्था में क्या करना चाहिए ?

उ0– यदि किसी पशु को पागल कुत्ता काटता है, तो इस स्थिति में काटे हुये स्थान को अच्छी प्रकार धो दें तथा निश्चित अंतराल पर एन्टीरैबीज का इंजेक्शन लगवाना चाहिए। पहला इन्जेक्शन कुत्ता काटने के 24 घंटे के अंदर तथा शेष तीसरे, 7वें, 14वें, 28वें एवं 90 दिन पर लगवायें।

प्र0– भैंस की पूँछ नीचे से कट–कट कर गिर रही है। बचाव के उपाय बतायें ?

उ0– यह बीमारी प्रायः गाय एवं भैसों में देखने को मिलती है। यह बीमारी सेलिनियम की कमी से तथा दूसरा अरगॉट नामक फफूँद से भी होता है। इलाज के साथ इसका बचाव भी जरूरी है। बचाव में पशु को सदैव गीला भूसा एवं पुआल नहीं खिलाना चाहिए तथा उपचार में सेलिनियम एवं विटामिन 'ई' का इन्जेक्शन लगाना चाहिए।

प्र0– बकरियों में पोकनी नामक बीमारी से बहुत मौत हो जाती है, बचाव के उपाय बतायें ?

उ0– यह बीमारी विषाणु से होती है इसको बकरी का प्लेग भी कहा जाता है। इस बीमारी का उपचार केवल बचाव है इसलिए मई–जून माह में भेड़ एवं बकरियों को इसकी टीका लगवाना चाहिए तथा यदि किसी भेड़ एवं बकरियों को यह बीमारी हो जाती है तो उसे समूह से अलग कर उसका इलाज कराना चाहिए अन्यथा दूसरे पशुओं को भी यह बीमारी हो सकती है।

प्र0– दलहनी और गैर–दलहनी चारों में अन्तर बतायें ?

उ0– दलहनी चारा जैसे बरसीम, लोबिया, ग्वार इत्यादि में गैर–दलहनी जैसे जई, ज्वार, मक्का आदि चारों की अपेक्षा प्रोटीन अधिक मात्रा में पायी जाती है अतः यह ज्यादा पौष्टिक होता है। इसके अलावा दलहनी चारों की खेती से भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है।

प्र0– बकरी के नर बच्चों का बंध्याकरण कब करें और इससे क्या लाभ है ?

उ0– नर बच्चो का बंध्याकरण एक माह की आयु तक कर देना चाहिए। बंध्याकरण के पश्चात् जो खाल प्राप्त होती है वह गंधहीन होती है और मांस भी गुणात्मक होता है।

प्र0– पशुओं में ब्यात के पश्चात् यदि जेर/खेड़ी रूक जाती है तो क्या करना चाहिए ?

उ0– साधारणतया जेर/खेड़ी पशुओं के ब्याने के 6–12 घंटे तक स्वतः गिर जाती है। परन्तु यदि 12 घंटे पश्चात् भी खेड़ी नहीं गिरती है तो यूट्रोटोन दवा

900 मि.ली. लेकर 300 मि.ली. तीन छोटे–छोटे अन्तराल पर दें और भी दवा बाजार में उपलब्ध हैं जो परामर्श के उपरान्त दे सकते हैं। फिर भी यदि 24 घंटे तक जेर बाहर नहीं निकलता है तो पशु–चिकित्सक से सलाह अवश्य लें।

प्र0– कुछ पशु सरसों की खली चाव से नहीं खाते है क्या करें ?

उ0– सरसों की खली में ग्लूकोसाइनोलेट्स होते है जिससे स्वाद में कमी आ जाती है। खली को पानी में 8 घंटे भिगोने से इसका जलीय विघटन एवं स्वाद में सुधार हो जाता है।

पशुपालन विभाग के माध्यम से केन्द्र तथा राज्य सरकार द्वारा संचालित विभिन्न योजनायें

देश में पशुपालन को बढ़ावा देने के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकार द्वारा विभिन्न योजनायें हर जनपद में चलायी जा रही हैं। योजनाओं का प्रारूप पशुपालन नीति के अन्तर्गत समय–समय पर बदलता रहता है। अधिक जानकारी के लिए किसान भाई जनपद के मुख्य पशुचिकित्साधिकारी से सम्पर्क कर सकते हैं। कुछ प्रमुख योजनाओं का विवरण वर्ष 2011–12 के अनुसार निम्नवत है।

भारत सरकार द्वारा संचालित योजनाएं

पाँच दिवसीय पशुपालक प्रशिक्षण एवं प्रसार : प्रत्येक विकास खण्ड के एक न्याय पंचायत पर आने वाली समस्त ग्राम सभाओं में निवास करने वाले पशुपालकों में से 50 महिला एवं 50 पुरूषों का चयन किया जाता है। पशुपालकों को वैज्ञानिक तरीकों से पशुपालन का व्यवसाय करने हेतु उन्नतशील तकनीकि की जानकारी कराते हुए उन्हें प्रशिक्षण दिया जाता है जो निम्नवत है–

1. पशु प्रबन्धन की समुचित जानकारी।
2. पशु स्वास्थ्य से सम्बन्धित संक्रामक बीमारियों के प्रति सुरक्षात्मक टीकाकरण की जानकारी।
3. परजीवी संक्रमण से रोक थाम की जानकारी।
4. उन्नतशील पशु प्रजनन, कृत्रिम गर्भाधान के लाभ, नस्ल सुधार सम्बन्धी जानकारी।
5. हरा चारा पशु पोषण आदि के महत्व पर प्रकाश तथा पशुओं हेतु वर्ष भर हरे चारे की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु व्यापक जानकारी।
6. अपौष्टिक चारे को पौष्टिक चारे में बदलने की क्रिया।
7. कुक्कुट विकास।
8. सूकर, भेंड़, बकरी विकास।

न्याय पंचायत स्तर पर पशुपालकों को चयन हेतु समिति : इस समिति के अध्यक्ष खण्ड विकास अधिकारी तथा सदस्य पशु चिकित्साधिकारी, पशुधन प्रसार अधिकारी एवं सचिव दुग्ध उत्पादक सहकारी समिति होते है।

बकरी पालन इकाई

लाभार्थी बेरोजगार युवक, युवतियाँ हो तथा बी.पी.एल. कार्ड धारकों को प्राथमिकता दी जाती है। एक बकरी पालन इकाई स्थापित करने के लिए कुल लागत रु. 68,000.00 है। कुल लागत का 50 प्रतिशत अर्थात रु. 34,000.00 बैंक ऋण के माध्यम से तथा कुल लागत का 25 प्रतिशत अर्थात रु. 17,000.00 लाभार्थी अंश के रूप में एवं कुल लागत का 25 प्रतिशत अर्थात रु. 17,000.00 आर.के.वी.वाई. के रूप में दिया जाता है। विवरण निम्नवत है–

1.	1 बकरा + 20 बकरी क्रय	रु.	42,500.00
2.	शेड निर्माण	रु.	13,500.00
3.	राशन के क्रय पर	रु.	9,000.00
4.	बीमा पर	रु.	2,000,00
5.	औषधि पर	रु.	1,000.00
	कुल	**रु.**	**68,000.00**

सूकर पालन इकाई

एक सूकर इकाई स्थापित करने की कुल लागत रु. 45,300.00 में कुल लागत का 50 प्रतिशत अर्थात रु. 22,650,00 बैंक ऋण के माध्यम से, कुल लागत का 25 प्रतिशत अर्थात रु. 11325.00 लाभार्थी अंश के रूप में एवं कुल लागत का 25 प्रतिशत अर्थात 11,325.00 आर.के.वी.वाई. के रूप में दिया जाता है। विवरण निम्नवत है–

1.	1 नर + 5 मादा	रु.	12,500.00
2.	शेड निर्माण	रु.	12,000.00
3.	राशन के क्रय पर	रु.	19,400.00
4.	बीमा पर	रु.	800,00
5.	औषधि पर	रु.	600.00
	कुल	**रु.**	**45,300.00**

राज्य सरकार द्वारा संचालित योजनाएं

पैरावेट योजना–पैरावेट/पशुमित्र की योजना मूलतः कृत्रिम गर्भाधान द्वारा नस्ल सुधार व प्रजाति संरक्षण को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण योगदान है। पशुपालकों के द्वार पर ही कृत्रिम गर्भाधान, टीकाकरण एवं प्राथमिक उपचार इनके द्वारा किया जाता है। जिन न्यायपंचायतों में पशुपालन विभाग की कोई संस्था न हो अथवा 1000 प्रजजन योग्य मवेशियों की सख्या हो पर इनकी नियुक्ति की जाती है। अभ्यर्थी की आयु 18 वर्ष से 40 वर्ष एव उसी न्याय पंचायत का निवासी हो तथा इण्टरमीडिएट (जीव विज्ञान/कृषि विषय से) उत्तीर्ण होना चाहिए। एक साल मानदेय देने के पश्चात स्वरोजगार योजनान्तर्गत पैरावेट अपना जीवकोपार्जन स्वयं कर सकेंगे।

प्रारम्भिक चयन समिति : चयन समिति के अध्यक्ष ब्लाक प्रमुख तथा सदस्य खण्ड विकास अधिकारी एवं पशु चिकित्साधिकारी होते हैं।

जिला चयन समिति

इस चयन समिति के अध्यक्ष मुख्य विकास अधिकारी तथा सदस्य जिला पंचायतराज अधिकारी एवं मुख्य पशु चिकित्साधिकारी होते हैं।

चयन प्रक्रिया होने के पश्चात पैरावेट को चार माह का प्रशिक्षण दिया जाता है। विभागीय अनुमोदित दरों एवं फार्मों से प्रति पैरावेट को एक कैटिलक्रश, एक बधियाकरण मशीन एवं एक तीन लीटर का तरल नत्रजन पात्र क्रय कर दिया जाता है तथा एक वर्ष तक तरल नत्रजन एवं सीमेन स्ट्रॉ देकर कृत्रिम गर्भाधान कार्य कराया जाता है। प्रशिक्षण के उपरान्त विभागीय निर्देशों के अनुसार एक वर्ष तक मानदेय इनके बैंक एकाउन्ट के माध्यम से दिया जाता है।

उद्देश्य : पशुपालकों में पैरावेट के माध्यम से डोर टू डोर पशुपालन सेवाएं तथा बेरोजगारों को स्वरोजगार उपलब्ध कराना।

एकीकृत सूकर विकास योजना

1. लाभार्थी अनुसूचित जाति का गरीब/बी.पी.एल. कार्ड धारक होना चाहिए।
2. स्वयं सहायता समूह में ऐसे लाभार्थियों का समूह बनाया जाता है, जो पहले से सूकर कार्य में जुड़े हो तथा उनके पास चार से पाँच सूकर पहले से पले हों।

3. सम्बन्धित पशु चिकित्साधिकारी समूह गठन के उपरान्त उस ग्राम सभा के ग्राम प्रधान एवं खण्ड विकास अधिकारी से सूची अनुमोदित करा कर सम्बन्धित बैंक में एकाउन्ट खोलने की कार्यवाही सुनिश्चित करायेंगे। तत्पश्चात् जिले स्तर पर मुख्य विकास अधिकारी, जिला पंचायतराज अधिकारी एवं मुख्य पशु चिकित्साधिकारी से स्वीकृत होने के पश्चात कार्यवाही करेंगे।

4. इस योजना में 100 प्रतिशत अनुदान अनुमन्य है। प्रति समूह रुपये 1,00000.00 का पैकेज निम्नानुसार है–

- कार्यशील पूँजी प्रति समूह मादा सूकरियों के क्रय एवं उनके उपयोग में आने वाली सामग्रीः रु. 40,000.00
- सूकर बाड़ों का निर्माणः रु. 20,000.00
- 10 उन्नतशील नस्ल के नर सूकरों का क्रय (दर 3000/प्रति, बीमा सहित): रु. 30,000.00

उपरोक्त धनराशि रुपये 90,000.00 का चेक समूह के खाते में डाल कर संचालित कराया जाता है तथा रु. 10,000.00 की दवा प्रति समूह मुख्य पशु चिकित्साधिकारी द्वारा विभागीय क्रय दर पर क्रय कर सम्बन्धित पशुचिकित्साधिकारियों को आपूर्ति की जाती है।

बैकयार्ड पोल्ट्री विकास योजना

1. लाभार्थी कुक्कुट पालन में रूचि रखते हों।
2. अनुसूचित जाति के निर्बल व्यक्ति योजना के लाभार्थी होंगे।
3. लाभार्थियों का चयन ग्राम प्रधान द्वारा प्राप्त चयनित सूची का परीक्षण पशु चिकित्साधिकारी एवं खण्ड विकास अधिकारी करेंगे। इसके पश्चात जनपद स्तर पर मुख्य विकास अधिकारी, जिला पंचायतराज अधिकारी एवं मुख्य पशु चिकित्साधिकारी के द्वारा अनुमोदित किया जायेगा।
4. लाभार्थियों को चयन के पश्चात एक सप्ताह का प्रशिक्षण समीप के पशु चिकित्साधिकारी द्वारा दिया जायेगा।
5. चूजे, आहार, दवा इत्यादि की व्यवस्था मुख्य पशु चिकित्साधिकारी द्वारा निदेशालय से प्राप्त दिशा निर्देश के क्रम में किया जाता है।

6. यह योजना 100 प्रतिशत अनुदानित है। प्रति इकाई रु. 3000.00 मात्र का पैकेज है जिसका विवरण निम्नानुसार है–

क.	50 चूजे पर रु. 23.00 प्रति एक दिवसीय डुवल परपज	1150.00
ख.	दवा	200.00
ग.	छप्पर की व्यवस्था	500.00
घ.	आहार 50 कि.ग्रा., दर रु. 18.00 प्रति कि.ग्रा.	900.00
ड.	यातायात पर व्यय	50.00
च.	प्रशिक्षण पर व्यय	200.00
	योग (रुपये)	**3000.00**

डेयरी विकास में बैंकों का योगदान

राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) कृषि एवं कृषि सम्बन्धित ग्रामीण विकास के लिए बैंकों को कम ब्याज पर ऋण प्रदान करता है। प्रत्येक क्षेत्र में एक अग्रणी बैंक होता है जो गांव स्तर तक बैंकों को धनराशि उपलब्ध कराते हैं। यदि कोई पशुपालक बैंकों से ऋण सुविधा चाहता है तो वह सीधा बैंक से सम्पर्क करके ऋण ले सकता है। उसके लिए उस बैंक में उसका खाता होना अनिवार्य हैं। 25000 रूपये तक के ऋण के लिए किसी सिक्योरिटी की जरूरत नहीं है। एक गारन्टर, जिसका उस बैंक में खाता होता है, कि जरूरत होती है। पशुपालक राज्य सरकार द्वारा डेयरी विकास योजनाओं का लाभ उठा सकता है। उनके पास अपना आवेदन भेजकर ऋण सुविधा पा सकता है। इन योजनाओं में उसे ब्याज छूट भी मिल जाती हैं। 25000 रूपये से अधिक ऋण के लिए उसे जमीन अथवा कोई सम्पत्ति बैंक के पास गिरवी रखनी होती हैं। डेयरी व्यवसाय हेतु राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) द्वारा डेयरी उद्यमिता विकास योजना के अन्तर्गत किसानों को ऋण उपलब्ध कराते है।

पशु बीमा

देश में चार गैर जीवन बीमा कम्पनियॉ ओरियन्टल इन्श्योरेन्स, न्यू इण्डिया इन्श्योरेन्स, नेशनल इन्श्योरेन्स एवं यूनाइटेड इन्डिया इन्श्योरेन्स पशुओं का बीमा करती है। पशु का बीमा करवाने के लिए पशु चिकित्सक से पशु स्वास्थ्य प्रमाण पत्र लेना होता है। पशु चिकित्सक पशु के स्वास्थ्य की जाँच करके कम्पनी का दिया छल्ला कान में डाल देता है। इस छल्ले पर कम्पनी का नम्बर अंकित होता है। प्रमाण पत्र के साथ बीमा प्रीमियम कम्पनी में जाकर जमा करना होता है। यदि पशु किसी सरकारी योजना के अन्तर्गत खरीदा गया है तो उसके लिए पशु के मूल्य का 2.25 प्रतिशत तथा अन्य के लिए 5 प्रतिशत बीमा प्रीमियम जमा करना होता है। ये दरें बदलता रहता हैं। प्रीमियम जमा कराने के तुरन्त बाद से एक साल तक के लिए पशु का बीमा हो जाता है। यदि किन्ही कारणों जैसे बाढ़, आग, चोट या बीमारी के कारण पशु की मृत्यु हो जाये तो तुरंत बीमा कम्पनी में खबर करना चाहिए। पशु–चिकित्सक से पशु की शव परीक्षा रिपोर्ट तथा दावा

फार्म भरकर कम्पनी में जमा करवायें। पशु के कान में डाले गये छल्ले को सम्भाल कर रखें। यदि कभी छल्ला कान से निकल जाये तो कम्पनी में सूचना देकर दूसरा छल्ला लगवाना जरूरी है। इस प्रकार बीमा कराकर पशुपालक पशु की मृत्यु होने पर पशु का मूल्य बीमा कम्पनी से प्राप्त कर सकता है तथा आर्थिक हानि से बच सकता है।

तकनीकि स्रोत

- भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, बरेली – 243122 (उ0प्र0)
- राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल – 132001 (हरियाणा)
- केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर, बरेली – 243122 (उ0प्र0)
- केन्द्रीय बकरी अनुसंधान संस्थान, मखदूम, फरह, मथुरा – 281122 (उ0प्र0)
- भारतीय चारागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान, झाँसी – 284003 (उ0प्र0)

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch